गद्यतरंगिणी

I

गद्यतरंगिणी

I

(Hindi)
GADYATHARANGINI I
Prose Collection

Compiled by
a committee appointed by
University of Kerala

Printed at
Valsa Printers
Trivandrum

Published 1980

Price Rs. 2·25

Published by
Chemmanam Chacko
Director
Department of Publications
For the University of Kerala
Trivandrum

गद्यतरंगिणी

I

प्रकाशन विभाग
केरल विश्वविद्यालय
तिरुवनन्तपुरम
१९८०

Compiled by
The Board of Studies in Hindi (Pass)
University of Kerala

मुद्रण :
वत्सा मुद्रणालय, तिरुवनन्तपुरम

प्राक्कथन

प्री डिग्री परीक्षा की पाठ्य-पुस्तक के रूप में 'गद्योपहार' के बाद केरल विश्वविद्यालय की ओर से अब 'गद्य तरंगिणी' (भाग I) प्रकाशित की जा रही है। पाठ्य-सामग्री को सरल और लघुतर बनाने के उद्देश्य से प्रस्तुत संकलन में पाठों की संख्या कम की गयी है। आशा है कि इस कारण अध्यापकों को छात्रों से भाषा-सम्बन्धी रचना-अभ्यास कराने केलिए पर्याप्त समय मिल जायेगा।

हम उन उदार लेखकों का आभार मानते हैं जिन्होंने अपनी रचनाओं को प्रस्तुत संकलन में सम्मिलित करने की अनुमति दी है।

अध्यक्ष
हिन्दी पाठ्य-परिषद

विषय सूची

* 'पराग' के सौजन्य से

चन्द्रशेखर आज़ाद

बनारसीदास चतुर्वेदी

[बनारसीदास चतुर्वेदीजी की गणना श्रेष्ठ साहित्यिकों और पत्रकारों में की जाती है। हिन्दी की प्रसिद्ध मासिक पत्रिका "विशाल भारत" का उन्होंने अनेक वर्षों तक संपादन किया है। रेखा चित्र और संस्मरण लिखने में उन्होंने विशेष सफलता पाई है। उनकी रचनाओं में 'रेखाचित्र', 'संस्मरण', 'हमारे आराध्य' आदि प्रमुख हैं। उन्होंने जीवन को बहुत निकटता से देखा है और उनका अनुभूत ज्ञान अत्यंत गहरा है। अतः उनके रेखा चित्र और संस्मरण अत्यंत मार्मिक हो गए हैं।

प्रस्तुत रेखा चित्र में लेखक ने देशभक्त चन्द्रशेखर आजाद के लडकपन और जवानी के दिनों की कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन किया है। आजाद के आत्मोत्सर्ग का उज्वल चित्र इस में प्रस्तुत किया गया है।]

काशी के जिला मजिस्ट्रेट की अदालत में बड़ी भीड़ थी। भीड़ के बीच से हथकडी पड़े हुए एक सोलह वर्ष के बालक को चार सिपाही बड़ी सतर्कता से लाये। बालक के मुखमंडल पर स्वाभिमान, निर्भीकता और आत्मविश्वास के भाव स्पष्ट थे। अदालत में पहुँचने पर बालक की हथकडियां खोल दी गईं। मुकद्दमा प्रारंभ हुआ। मजिस्ट्रेट ने बालक से पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है?" बालक ने सगर्व उत्तर दिया—"आजाद"। मजिस्ट्रेट ने पूछा—"तुम्हारा घर कहां है?" बालक ने उत्तर दिया—"जेलखाना"। मजिस्ट्रेट ने खीझकर पूछा—"तुम क्या काम करते हो?

बालक ने कहा—"भारत माँ को स्वाधीन कराने की साधना।"

अब मजिस्ट्रेट के रोष का ठिकाना न रहा। उसने झल्ला कर कहा, "ऐसे बेढंगे उत्तर क्यों देते हो? जानते नहीं यह अदालत है!" बालक ने उसी प्रकार निर्भीकता से उत्तर दिया, "मेरे उत्तर बेढंगे नहीं, सही हैं। विदेशी सरकार की पराधीनता स्वीकार न करने पर हमारा सच्चा नाम आजाद ही हो सकता है। जब तक पराधीनता की शृंखलाओं को तोड न देंगे, तब तक हमारा सच्चा घर जेलखाना और वास्तविक कार्य भारत-माता की स्वाधीनता की साधना ही हो सकती है।"

मजिस्ट्रेट ने फिर झल्ला कर पूछा—"क्या तुम ने सिपाही पर हमला किया?" आजाद ने दृढता से उत्तर दिया, "हां, क्योंकि सिपाही शान्त सत्याग्रहियों को बूट की ठोकरें मार रहा था और गालियां बक रहा था। मजिस्ट्रेट ने आज्ञा दी, "इसे ले जाओ और पन्द्रह कोडे लगा कर मुक्त कर दो।"

कोडे खा कर बालक जब जेल से बाहर निकला तो उसका शरीर लोहू लुहान था। कोडों के निशान स्पष्ट थे और जगह जगह से रक्त निकल रहा था। परन्तु बालक उसी प्रकार से शान्त और दृढ़ था। जेल के फाटक के बाहर बहुत से स्त्री पुरुष उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने फूल मालाओं से उसके कंठ को भर दिया और "भारत माता की जय" 'चन्द्रशेखर आजाद की जय' के गगन भेदी नारों से सारा वायुमंडल गूंज उठा।

यही चन्द्रशेखर आजाद आगे चल कर 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन सेना' के प्रधान सेनापति नियुक्त हुए और इन्होंने क्रान्तिकारियों

के एक विशाल दल का संगठन किया, जिस में सरदार भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरु बटुकेश्वर दत्त जैसे सदस्य थे ।

चन्द्रशेखर आजाद का जन्म मध्यप्रदेश में झाबुआ जिले के भावरा नामक ग्राम में हुआ था । उनके पिता पं० सीताराम तिवारी उन्नाव जिले के बदरखा नामक ग्राम के निवासी थे । जीविकोपार्जन केलिए वे भावरा पहुँच गए थे । वेतन उन्हें लगभग आठ रुपया मासिक मिलता था । इसी में उन्हें अपने परिवार का पालन करना पड़ता था । अतः आजाद का बाल्यकाल अत्यंत निर्धनता से व्यतीत हुआ । चौदह-पन्द्रह वर्ष की अवस्था में वे विद्याध्ययन केलिए काशी आ गये और एक छोटी-सी कोठरी लेकर संस्कृत का अध्ययन करने लगे ।

सन १९२१ में जब काशी में असहयोग आन्दोलन चल रहा था, तब चन्द्रशेखर भी उस में सम्मिलित हुए । महात्मागांधी पर उनकी अपार श्रद्धा थी, परन्तु शान्त सत्याग्रहियों पर होनेवाले अमानुषिक अत्याचारों को उनका हृदय सहन न कर सका । चौरीचौरा का हत्याकांड होने पर महात्मागांधी ने असहयोग आन्दोलन स्थगित कर दिया । चन्द्रशेखर आजाद और उनके अन्य साथियों के मन में यह विचार उठा कि अहिंसा द्वारा जन जागृति तो होती है, परन्तु केवल इसी का सहारा लेकर विदेशी सरकार को नहीं निकाला जा सकता । सरकार को आतंकित करने केलिए सशस्त्र उपायों का भी अवलम्बन करना चाहिए । अतः क्रान्तिकारी आन्दोलन छेड़ा गया ।

सारे देश में क्रान्तिकारियों की गुप्त सभाएं होने लगी और ऐसे नवयुवकों की खोज होने लगी जो जान हथेली पर रख कर क्रान्तिकारी उपायों का अवलम्बन कर सकें और घोर यन्त्रणाएं देने पर भी दल का भेद न बतायें और हंसते-हंसते फांसी के तख्ते पर झूल जायं । स्थान स्थान पर

ऐसे दल बने और उन्हें संगठित करके हिन्दुस्तान रिपब्लिकन सेना का संगठन किया गया। दल के पास संगठन करने केलिए रुपये न थे। अतः सन् १९२५ की ९ अगस्त को काकोरी के पास एक पसेंजर गाड़ी को रोक कर सरकारी खजाना लूटा गया। यह काम शहीद राम प्रसाद बिस्मिल के नेतृत्व में किया गया था और उसमें आजाद भी शामिल थे। कालान्तर में इस डकैती के सिलसिले में बहुत से क्रान्तिकारी पकड़े गये, केस चला और राम प्रसाद बिस्मिल, रोशनसिंह, अशफाक उल्लाखां तथा राजेन्द्र लहरी को फांसी की सजा दी गयी। जेल में घोर यन्त्रणाएं देने पर भी उन्होंने अपने फरार साथियों का भेद न बताया और वे—

सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है जोर कितना बाजुए कातिल में है।
गाते हुए फांसी के तख्ते पर झूल गये।

चन्द्रशेखर आजाद पुलिस के हाथ न लग सके। उनको पकड़ने केलिए बड़े बड़े इनाम घोषित किए गये। भारत के प्रत्येक नगर और गांव में उनके फोटो चिपकाये गये, परन्तु उन्हें पुलिस गिरफ्तार न कर सकी। विशेषता यह थी कि आजाद किसी जंगल या पहाड़ में छिप कर नहीं रहते थे। वे वेश और नाम बदल कर जगह जगह घूमते रहते थे और चारों ओर घूम घूम कर अपने दल का संगठन करते थे। कई बार उनका ऐसे गुप्तचरों का भी साथ हो गया जो उन्हीं को पकड़ने की फिक्र में थे। आजाद को देख कर उन्हें बार बार सन्देह होता था, परन्तु उनकी वेशभूषा और बातचीत करने का ढंग देख कर उनका मन उन्हें आजाद मान लेने को तैयार न होता था। आजाद उनके साथ अपने ही पकड़वाने के उपायों पर बातचीत करके चले आते। झांसी में कुछ दिनों तक उन्होंने मोटर-ड्राइवर बन कर मोटर चलाना सीखा और पुलिस सुपरिटेंडेंट को

अपना मोटर चलाना दिखाकर ड्राइवरी का लाइसेन्स भी प्राप्त कर लिया।

साइमन कमीशन का विरोध करते हुए पंजाब केसरी लाला लजपतराय को पुलिस ने लाठियों से इतनी बुरी तरह पीटा था कि कुछ दिनों बाद उनकी मृत्यु हो गई। सारा देश राष्ट्र के इस अपमान से क्षुब्ध हो उठा। क्रान्तिकारी दल ने आजाद और भगतसिंह के नेतृत्व में इस का बदला लेने का निश्चय किया और योजना के अनुसार आजाद की देखरेख में भगतसिंह और राजगुरु ने लाहौर के डिप्टी सुपरिंटेंडेंट सांडर्स को गोली से मार दिया जिसकी लाठी से लालाजी घायल हुए थे। यह घटना दिसम्बर १९२८ की है। आजाद और उनके साथियों के इस कार्य से देश में हर्ष और उत्साह की एक लहर-सी दौड़ गयी।

उन दिनों देश में अंग्रेजों के खिलाफ़ काफी असन्तोष था। मजदूर व्यापक पैमाने पर हड़ताल कर रहे थे। अंग्रेज सरकार ने जनता को कुचलने केलिए दो दमनकारी बिल केन्द्रीय असेम्बली में पेश किये। देश ने एक स्वर से उनका विरोध किया। लेकिन विदेशी सरकार सत्ता के मद में पागल हो रही थी। उसे जनता का विरोध सुनाई नहीं पड़ रहा था और वह दोनों बिलों को पास कराने पर तुली थी। आजाद और उनकी पार्टी ने बहरों के कान खोलने का निश्चय किया। तय किया गया कि केन्द्रीय असेम्बली में बम फेंककर बिलों का विरोध किया जाय। योजना के अनुसार भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त ने असेम्बली में बम फेंका और वहीं गिरफ्तार हो गए। अदालत के सामने उन्होंने जो बयान दिया, उस ने सिद्ध कर दिया कि क्रान्तिकारी दल का उद्देश्य डाके डालना और दूसरों की हत्या करना नहीं, बल्कि देश को स्वाधीन करना है और इस केलिए वे हंसते-हंसते घोर यन्त्रणाओं को सहने और सहर्ष फांसी के तख्ते पर भी

चढ़ने को तत्पर हैं। इस के बाद आजाद के और भी साथी गिरफ्तार हो गए। अपने प्रमुख साथियों के गिरफ्तार होने पर दल के पुनर्गठन और आन्दोलन को आगे बढ़ाने का समस्त भार आजाद पर आ गया। अपनी जान पर खेल कर आज़ाद इसे बराबर निभाते रहे। इसी कार्य केलिए उन्हें प्रयाग आना पडा। प्रयाग में एक दिन जब वे आलफ्रेड पार्क में बैठे हुए थे, एक विश्वासघाती की सूचना देने पर एकाएक पुलिस का एक बडा दल वहां आ गया। आजाद सारी स्थिति समझ गये। पुलिस के घेरे से बच निकलने का कोई उपाय न देखकर वे एक विशाल वृक्ष की आड़ मे स्थिर भाव से खडे हो कर अपने रिवाल्वर से गोलियां चलाने लगे। पुलिस के विशाल दल में से किसी भी व्यक्ति को उनके पास पहुँचने का साहस न हुआ। यह लडाई लगभग, एक घण्टा चली और आज़ाद की गोलियों से कई आदमी घायल हुए। कहते हैं कि जब उनके पास एक गोली बची तब उसे उन्होंने स्वयं अपनी कनपटी पर दाग दिया और अमर हो कर भारत माता की गोद में सदा केलिए सो गये।

आजाद वीरता की मूर्ति थे, स्फूर्ति उनके अंग अंग से झलकती थी। वे निर्भीकता के साक्षात स्वरूप थे। राष्ट्र ने उनके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करने केलिए उनकी मूर्ति उसी स्थान पर स्थापित की है जहां वे वीरगति को प्राप्त हुए थे। मूर्ति के निकट ही आजाद पुस्तकालय है जहां पर भारतमाता की स्वाधीनता केलिए फांसी पर झूलनेवाले उनके अनेक साथियों की जीवन गाथाएं सुरक्षित रूप से हैं—

शहीदों के मजारों पर लगेंगे हर बरस मेले,
वतन पर मरनेवालों का यही बाकी निशां होगा।

कठिन शब्दार्थ

खीझना — दुःखी और क्रुद्ध होना । झल्लाना — चिढ़ना । स्थगित करना — रोक देना । फरार — भागा हुआ । तमन्ना — कामना सत्ता - अधिकार । घेरा — दायरा, आवरण । मज़ार — समाधि — कब्र वतन—जन्मभूमि । निशां — लक्षण चिह्न । सरफरोशी — जान की बाजी लगाना । बाजुए कातिल में — हत्यारे के हाथ में ।

व्याख्या करें: —

१. ऐसे बेढंग उत्तर ... यह अदालत है ?
२. जब तक पराधीनता ... साधना ही हो सकती है ।
३. चन्द्रशेखर आज़ाद और उनके ... नहीं निकाला जा सकता ।

उत्तर लिखें ।

१. जिला मजिस्ट्रेट चन्द्रशेखर आज़ाद से क्यों रुष्ट हो गए ?
२. जिन परिस्थितियों में आज़ाद को मजिस्ट्रेट के आदेश से कोडे खाने पडे थे, उनका वर्णन कीजिए ।
३. चन्द्रशेखर आज़ाद के जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन कीजिए ।
४. चन्द्रशेखर आज़ाद की वीरता और देश भक्ति को प्रकट करने-वाली कौन कौन सी घटनाएँ इस में दी गई हैं ।

परीक्षा

प्रेमचंद

[प्रेमचंद (१८८०-१९३६) हिन्दी के कहानी-सम्राट और उपन्यास-सम्राट माने जाते हैं। उनका जन्म काशी के निकट एक गाँव में हुआ था। बचपन का जीवन बहुत कष्टमय था। अनवरत अध्यवसाय से बी० ए० पास करके स्कूलों के इन्स्पेक्टर बने। लेकिन गांधीजी के प्रभाव में आकर उन्होंने नौकरी छोड़ दी। उनकी कहानियों और उपन्यासों में उत्तर भारत का सामाजिक जीवन साकार हो उठा है। उनका प्रसिद्ध उपन्यास 'गोदान' भारतीय किसान की करुण-कहानी है।

प्रस्तुत कहानी 'परीक्षा' में कर्मोन्मुख सहानुभूति की महिमा का वर्णन किया गया है।]

जब रियासत देवगढ़ के दीवान सरदार सुजानसिंह बूढ़े हुए, तो परमात्मा की याद आई। जाकर महाराज से विनय की कि दीनबन्धु, दास ने श्रीमान् की सेवा चालीस साल तक की, अब कुछ दिन परमात्मा की सेवा करने की आज्ञा चाहता हूँ। दूसरे, अब मेरी अवस्था ढल गई, राज-काज सँभालने की शक्ति नहीं रही, कहीं भूल-चूक हो जाय, तो बुढ़ापे में लांछन लगे, सारे जीवन का किया-धरा मिट्टी में मिल जाय।

राजा साहब अपने अनुभवशील, नीति-कुशल दीवान का बड़ा आदर करते थे। बहुत समझाया, लेकिन जब दीवान साहब ने न माना, तो

हारकर उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। पर शर्त यह लगा दी कि रियासत केलिये नया दीवान आप ही को खोजना पड़ेगा।

* * * * *

दूसरे दिन देश के प्रसिद्ध पत्रों में यह विज्ञापन निकला कि देवगढ़ केलिए एक सुयोग्य दीवान की जरूरत है। जो सज्जन अपने को इस पद के योग्य समझें, वे वर्तमान दीवान सरदार सुजानसिंह की सेवा में उपस्थित हों। यह जरूरी नहीं कि ग्रेजुएट हों, मगर हृष्ट-पुष्ट होना आवश्यक है, मन्दाग्निपीड़ित कमजोरों को यहां तक कष्ट उठाने की जरूरत नहीं। एक महीने तक उम्मीदवारों के रहन-सहन, आचार-विचार की देख रेख की जायगी। विद्या का कम परन्तु कर्तव्य का अधिक विचार किया जायगा। जो महाशय इस परीक्षा में पूरे उतरेंगे, वे इस उच्च पद पर सुशोभित होंगे।

इस विज्ञापन ने सारे मुल्क में हलचल मचा दी। ऐसा ऊँचा पद और किसी प्रकार की कैद नहीं। केवल नसीब का खेल है। सैकड़ों आदमी अपना-अपना भाग्य परखने केलिये चल खड़े हुए। देवगढ़ में नए-नए और रंग-बिरंग के मनुष्य दिखलाई देने लगे। प्रत्येक रेलगाड़ी से उम्मीदवारों का मेला सा उतरता। कोई पंजाब से चला आता था, तो कोई मद्रास से कोई नए फैशन का प्रेमी था, तो कोई पुरानी सादगी पर मिटा हुआ। पंडितों और मौलवियों को भी अपने-अपने भाग्य की परीक्षा करने का अवसर मिला। बेचारे सनद के नाम को रोया करते थे, यहाँ उसकी कोई आवश्यकता नहीं थी। रंगीन एमामे और चोगे तथा नाना प्रकार के अँगरखे और कनटोप देवगढ़ में अपनी सजधज दिखलाने लगे। लेकिन सबसे विशेष संख्या ग्रेजुएटों की थी, क्योंकि सनद की कैद न होने पर भी सनद से परदा तो ढका रहता है।

सरदार सुजानसिंह ने आगत महानुभावों के आदर-सत्कार का बड़ा अच्छा प्रबन्ध कर दिया था। लोग अपने-अपने कमरे में बैठे हुए रोज़ेदार मुसलमानों की तरह महीने के दिन गिना करते थे। हर एक मनुष्य अपने जीवन को अपनी बुद्धि के अनुसार अच्छे रूप में दिखाने की कोशिश करता था। मिस्टर 'अ' नौ बजे दिन तक सोया करते थे, आजकल वह बगीचे में टहलते हुए उषा का दर्शन करते थे। मिस्टर 'ब' को हुक्का पीने की लत थी, पर आजकल बहुत रात गये किवाड़ बन्द करके अंधेरे में सिगार पीते थे। मिस्टर 'द' 'स' और 'ज' से उनके घरों पर नौकरों की नाक में दम था, लेकिन वे सज्जन आजकल "आप और जनाब" के बगैर नौकरों से बातचीत नहीं करते थे। महाशय 'क' नास्तिक थे, मगर आजकल उनकी धर्मनिष्ठा देखकर मन्दिर के पुजारी को पदच्युत हो जाने की शंका लगी रहती थी। मिस्टर 'ल' को किताबों से घृणा थी, परन्तु आजकल वह बड़े-बड़े ग्रन्थ खोले हुए पढ़ने में डूबे रहते थे। जिससे बात कीजिये, वही नम्रता और सदाचार का देवता बना मालूम होता था। शर्माजी घड़ी रात ही से वेद-मन्त्र पढ़ने लगते थे, और मौलवी साहब को तो नमाज़ और सलावत के सिवा और कोई काम न था। लोग समझते थे कि एक महीने का झंझट है, किसी तरह काट लें, कहीं कार्य सिद्ध हो गया तो कौन पूछता है।

लेकिन मनुष्यों का वह बूढ़ा जौहरी आड़ में बैठा देख रहा था कि इन बगुलों में हंस कहाँ छिपा है।

* * * * *

एक दिन नए फैशनवालों को सूझी कि आपस में 'हॉकी' का खेल हो जाय। यह प्रस्ताव हॉकी के मंजे हुए खिलाड़ियों ने पेश किया। यह भी तो आखिर एक विद्या है, इसे क्यों छिपा रक्खें। सम्भव है, कुछ हाथों

की सफाई ही काम कर जाय चलिये, तय हो गया, कोर्ट बन गए। खेल शुरू हो गया और गेंद अनाथ की तरह ठोकरें खाने लगी।

रियासत देवगढ़ में यह खेल बिलकुल निराली बात थी। पढ़े लिखे भलेमानुस लोग शतरंज और ताश जैसे गंभीर खेल खेलते थे। दौड़-कूद के खेल बच्चों के खेल समझे जाते थे।

खेल बड़े उत्साह से जारी था। धावे के लोग जब गेंद लेकर तेजी से उड़ते, तो ऐसा जान पड़ता था कि कोई लहर बढ़ती चली आती है। लेकिन दूसरी ओर के खिलाड़ी इस बढ़ती हुई लहर को इस तरह रोक लेते थे, मानो लोहे की दीवार है।

संध्या तक यही धूमधाम रही। लोग पसीने से तर हो गये। खून की गर्मी आँख और चेहरे से झलक रही थी। हाँफते-हाँफते बेदम हो गये, लेकिन हार-जीत का निर्णय न हो सका।

अंधेरा हो गया था। इस मैदान से जरा दूर हटकर एक नाला था। उस पर कोई पुल न था। पथिकों को नाले में से चलकर आना पड़ता था। खेल अभी बन्द ही हुआ था, और खिलाड़ी लोग बैठ दम ले रहे थे कि एक किसान अनाज से भरी गाड़ी लिये उस नाले में आया। लेकिन कुछ तो नाले में कीचड़ थी और कुछ उसकी चढ़ाई इतनी ऊँची थी कि गाड़ी ऊपर न चढ़ सकती थी। वह कभी बैलों को ललकारता, कभी पहिये को हाथों से ढकेलता, लेकिन बोझ अधिक था, और बैल कमजोर। गाड़ी ऊपर को न चढ़ती और चढ़ती भी तो कुछ दूर चढ़कर फिर खिसककर नीचे पहुँच जाती। किसान बार-बार ज़ोर लगाता और बार-बार झुंझलाकर बैलों को मारता, लेकिन गाड़ी उभरने का नाम न लेती। बेचारा इधर-उधर निराश होकर ताकता, मगर वहाँ कोई सहायक नज़र

न आता था। गाड़ी को छोड़कर कहीं जा भी नहीं सकता था। बड़ी आपत्ति में फँसा था। इसी बीच में खिलाड़ी हाथों में डंडे लिये झूमते-झामते उधर से निकले। किसान ने उनकी तरफ सहमी आँखों से देखा। परन्तु किसी से मदद माँगने का साहस न हुआ। खिलाडियों ने भी उसे देखा--मगर बन्द आँखों से, जिनमें सहानुभूति न थी, स्वार्थ था—मद था, मगर उदारता तथा वात्सल्य का नाम भी न था।

* * * * *

लेकिन उसी समूह में एक ऐसा मनुष्य भी था, जिसके हृदय में दया थी और साहस था। आज हॉकी खेलते समय उसके पैरों में चोट लग गई थी। लँगड़ाता हुआ धीरे-धीरे चला आता था। अकस्मात् उसकी निगाह गाडी पर पड़ी, वह ठिठक गया। उसे किसान की सूरत देखते ही सब बात ज्ञात हो गई। स्टिक एक किनारे रख दी। कोट उतार डाला और किसान के पास जाकर बोला --"मैं तुम्हारी गाड़ी निकाल दूँ?"

किसान ने देखा एक गठे हुए बदन का लम्बा आदमी सामने खडा है। डरकर बोला--"हुज़ूर! मैं आपसे कैसे कहूँ?"

युवक ने कहा--"मालूम होता है, तुम यहाँ बड़ी देर से फंसे हो। अच्छा, तुम गाड़ी पर जाकर बैलों को साधो, मैं पहियों को ढकेलता हूँ। अभी गाड़ी ऊपर जाती है।"

किसान गाड़ी पर जा बैठा। युवक ने पहियों को जोर लगाकर उकसाया। कीचड़ बहुत ज्यादा थी। वह घुटने तक जमीन में गड़ गया, लेकिन हिम्मत न हारी। उसने फिर जोर किया, उधर किसान ने बैलों को ललकारा। बैलों को सहारा मिला, हिम्मत बँध गई, उन्होंने कंधे झुकाकर एक बार जोर किया, तो गाड़ी नाले के ऊपर थी।

किसान युवक के सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। बोला "महाराज, आपने आज मुझे उबार लिया, नहीं तो सारी रात आज यहीं बैठना पड़ता।"

युवक ने हंसकर कहा—"अब मुझे कुछ इनाम देते हो?"

किसान ने गंभीर भाव से कहा—"नारायण चाहेंगे, तो दीवानी आपको ही मिलेगी।

युवक ने किसान की तरफ गौर से देखा। उसके मन में एक संदेह हुआ, क्या यही सुजानसिंह तो नहीं हैं? आवाज मिलती है, चेहरा मोहरा भी वही। किसान ने भी उसकी ओर तीव्र दृष्टि से देखा। शायद उसके दिल के संदेह को भाँप गया मुस्कराकर बोला—"गहरे पानी पैठने से ही मोती मिलता है।"

* * * * *

निदान महीना पूरा हुआ। चुनाव का दिन आ पहुँचा। उम्मीदवार लोग प्रातःकाल से ही अपनी-अपनी किस्मतों का फैसला सुनने केलिए उत्सुक थे। दिन काटना पहाड़ हो गया। प्रत्येक के चेहरे पर आशा और निराशा के रंग आते थे। नहीं मालूम आज किसके नसीब जागेंगे, न जाने किस पर लक्ष्मी की कृपा-दृष्टि होगी।

संध्या समय राजा साहब का दरबार सजाया गया। शहर के रईस और धनाढ्य लोग, राज्य के कर्मचारी, दरबारी और दीवानी के उम्मीदवारों का समूह, सब रंग बिरंग की सजधज बनाए दरबार में आ बिराजे। उम्मीदवारों के कलेजे धड़क रहे थे।

तब सरदार सुजानसिंह ने खड़े होकर कहा—"मेरे दीवानी के उम्मीदवार महाशयो मैंने आप लोगों को जो कुछ कष्ट दिया हो, उसकेलिये मुझे क्षमा कीजिये। मुझे इस पद केलिये ऐसे पुरुष की आवश्यकता थी, जिसके हृदय में दया हो, और साथ ही साथ आत्म-बल। हृदय वह, जो उदार हो आत्मबल वह, जो आपत्ति का वीरता के साथ सामना करे। और इस रियासत के सौभाग्य से हमको ऐसा पुरुष मिल गया। ऐसे गुणों वाले संसार में कम हैं, और जो हैं, वे कीर्ति और मान के शिखर पर बैठे हुए हैं, उन तक हमारी पहुँच नहीं। मैं रियासत को पंडित जानकीनाथ-सा दीवान पाने पर बधाई देता हूँ!"

रियासत के कर्मचारियों और रईसो ने जानकीनाथ की तरफ देखा, उम्मीदवार-दल की आँखें भी उधर उठीं, मगर उन आँखों में सत्कार था, और इन आँखों में ईर्ष्या।

सरदार साहब ने फिर कहा—"आप लोगों को यह स्वीकार करने में कोई आपत्ति न होगी कि जो पुरुष स्वयं घायल होने पर भी एक गरीब किसान की भरी हुई गाड़ी को दलदल से निकालकर नाले के ऊपर चढ़ा दे, उसके हृदय में साहस, आत्मबल और उदारता का वास है। ऐसा आदमी गरीबों को कभी न सतायेगा। उसका संकल्प दृढ़ है, जो उसके चित्त को स्थिर रखेगा वह चाहे धोखा खा जाय, परन्तु दया और धर्म के मार्ग से कभी न हटेगा।"

कठिन शब्दार्थ:–

शर्त — बाजी, नियम। उम्मीदवार — Candidate. नसीब — भाग्य, किस्मत। परखना — परीक्षा या जाँच करना। सनद — प्रमाण-पत्र, Certificate. चोगा — gown. कनटोप — कानों को ढाँकनेवाली टोपी। रोजा — रमजान महीने का उपवास। जौहरी — रत्न परखनेवाला।

व्याख्या करें:–

१. "महाराज, आपने आज मुझे उबार लिया, नहीं तो सारी रात आज यहीं बैठना पड़ता।"

२. 'शायद उसके दिल के संदेह को भाँप गया। मुस्कराकर बोला—'गहरे पानी पैठने से ही मोती मिलता है।'

३. 'लेकिन मनुष्यों का वह बूढ़ा जौहरी आड़ में बैठा देख रहा था कि इन बगुलों में हँस कहाँ छिपा है।'

उत्तर लिखें:–

१. दीवान-पद के उम्मीदवारों ने अपनी अपनी असली आदतों को कैसे छिपा रखने की कोशिश की ?

२. जानकीनाथ ने किसान की सहायता कैसे की ?

३. सरदार सुजानसिंह ने नये दीवान को कैसे चुन लिया ?

४. जानकीनाथ में दीवान बनने की क्या-क्या योग्यताएँ है ?

५. इस कहानी का संदेश क्या है ?

सोवियत रूस की झलक

भीष्म साहनी

[भीष्म साहनी (जन्म १९१५ ई०) आधुनिक हिन्दी कहानीकारों में प्रमुख हैं। उनकी कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन को स्वाभाविक और कलात्मक ढंग से चित्रित किया है। 'तमस' नामक प्रसिद्ध उपन्यास में उन्होंने हिन्दु-मुस्लीम दंगों का मार्मिक वर्णन किया है और सांप्रदायिकता के दुष्परिणामों पर प्रकाश डाला है।

प्रस्तुत लेख सोवियत रूस की एक यात्रा का रोचक विवरण है।]

मास्को-निवास के शुरू के दिन मेरे लिए बड़े अनूठे और दिलचस्प साबित हुए। दिल्ली से मास्को तक की यात्रा का अनुभव भी चिरस्मरणीय है। जाड़ों के दिनों में हवाई जहाज से मास्को केलिए रवाना हुआ था। शीघ्र ही हवाई जहाज़ हिन्दुकुश और हिमालय की पर्वतमालाओं के ऊपर उड़ान भरने लगा था। सभी पर्वत बर्फ से ढके थे और मैं अभिभूत-सा प्रकृति के विराट सौन्दर्य को निहार रहा था। दिल्ली से मास्को बहुत दूर है, लेकिन छह घंटे में हवाई जहाज मास्को के निकट जा पहुँचा था। नीचे अब पर्वतामालाओं के स्थान पर दूर-दूर तक फैले सपाट मैदान थे, लेकिन यहाँ भी चारों ओर बर्फ ही बर्फ बिछी थी, पेड़-पौधे, घरों की छतें, रास्ते सभी बर्फ से ढके थे। बड़ा भव्य और सुंदर दृश्य था।

जब हवाई जहाज़ से बाहर निकला तो तापमान शून्य से २५ डिग्री कम था, और हवा नश्तर की तरह काटती थी। जो ओवरकोट मैं दिल्ली से बनवा लाया था वह किसी काम का साबित नहीं हुआ, उस में मैं यों

ठिठुर रहा था जैसे कोई हमारे यहाँ पूस की रात में खिड़की में ठिठुरता है। हाथ-पैर सुन्न हो रहे थे और मालूम होता था कि कान जैसे अभी कटकर अलग हो जाएँगे।

हवाई अड्डे से निकला तो मैंने पाया कि सड़कों पर खूब चहल-पहल है बसें, ट्रामें, कारें खूब चल रही हैं। विशाल, खुली सड़कें और उनके किनारे पेड़ों की पाँतें भी इस समय बर्फ़ से ढकी थीं। मास्को-नगर में प्रवेश करने पर सड़क के दोनों ओर ऊँची-ऊँची इमारतें शुरू हो गई। कोई भी इमारत आठ या नौ मंजिलों से कम नहीं थी। सड़क के किनारे पटरियों पर लोग आ-जा रहे थे, लेकिन सभी ने भारी-भरकम ओवरकोट, हाथों में दस्ताने सिर पर फ़र की टोपियाँ और पैरों में फ़र के बूट पहन रखे थे। मास्को की सर्दी का यह मेरा पहला अनुभव था।

हमारी मोटर एक विशालकाय घर के आँगन में दाखिल हुई और हमें हमारे फ्लैट में पहुँचाया गया जो पाँचवी मंजिल पर था। उस वक्त तक अँधेरा उतर आया था, हालांकि उस समय केवल दोपहर के चार बजे थे। जो रूसी सज्जन मुझे लिवाने आए थे वे मुझे मास्को के बारे में बहुत कुछ समझा रहे थे। उन्होंने ही मुझे बताया कि जाड़ों में अँधेरा दोपहर के चार बजे से लेकर प्रातः आठ बजे तक रहता है और गर्मियों में रात के ग्यारह बजे तक रोशनी रहती है और प्रातः तीन बजे ही सूरज निकल आता है।

फ्लैट के अंदर गर्मी थी। यहाँ तक कि ओवरकोट तो क्या, कोट तक पहनने की जरूरत नहीं थी। रूसी मित्र ने बताया कि सभी घरों को अंदर से गर्म रखा जाता है। बाहर का तापमान जहाँ शून्य से २५ डिग्री नीचे था वहाँ फ्लैट के अंदर शून्य से २४ डिग्री ऊपर था। मैंने चैन की साँस ली और ओवरकोट उतार कर रख दिया।

मैंने खिड़की से झांककर बाहर देखा तो स्तब्ध-सा रह गया। लंबे-चौड़े आंगन के पार ऊंची-ऊंची दीवारें थीं और उनमें बनी असंख्य खिड़कियों में रोशनी ही रोशनी थी। कहीं लाल, कहीं पीली, कहीं हरी। दाईं ओर बड़ी सड़क के किनारे भी ऊँचे-ऊँचे घर थे और उनमें भी रंगारंग के असंख्य कुमकुमे जल रहे थे। मुझे लगा जैसे मैं किसी परीलोक में पहुंच गया हूं, जहाँ चारों ओर हीरे-मोती जड़े हैं। लेकिन उस वक्त भी नीचे आंगन में कुछ बच्चे खेल रहे थें, बर्फ़ की श्वेत पृष्ठभूमि में काले-काले ओवरकोट और फ़र की टोपियाँ पहने ये बच्चे नन्हें भालुओं जैसे लग रहे थे।

मेरे रूसी मित्र बताने लगे, "इस इमारत में लगभग आठ सौ फ्लैट हैं और प्रत्येक फ्लैट में कोई-न-कोई परिवार रहता है। इसका मतलब है कि लगभग तीन हजार व्यक्ति इस एक ही इमारत में रहते हैं।"

दूसरे दिन हम मास्को की सैर को निकले सबसे पहले हम लेनिन की समाधि देखने गए, जहाँ सोवियत संघ के महान नेता ब्लादीमिर इल्योच लेनिन का शव सुरक्षित रखा है। लाल चौक में प्रसिद्ध क्रेमलिन प्रासाद के बाहर यह समाधि स्थित है। हम लोग यह देखकर हैरान रह गए कि जाड़े और बर्फ़ के बावजूद समाधि के बाहर दर्शकों की लंबी पांत लगी है— और यह पांत लगभग दो फ़लांग लंबी रही होगी। सभी लोग अपने महान् नेता के दर्शन करने आए थ। रूसी साथी ने बताया कि दर्शकों की ऐसी लंबी पांत वहाँ रोज ही लगी रहती है। सोवियत संघ में लेनिन को वही आदर और सत्कार प्राप्त है, जो हमारे देश में राष्ट्रपिता गांधीजी को प्राप्त है।

वहाँ से हम मास्को की भूमिगत रेलवे देखने गए जिसे 'मेट्रो' कहते हैं। इस भूमिगत रेल ने भी हमें बड़ा प्रभावित किया। जमीन के ही नीचे जगह-जगह स्टेशन हैं। ये स्टेशन बड़े सुंदर हैं, भित्तिचित्रों और मूर्तिकला के विशिष्ट नमूनों से सजे हुए, और दीवारें जैसे संगमर्मर कीं। प्रत्येक स्टेशन की बनावट और सजावट अलग-अलग है। गाड़ी हर पंद्रह सेकंड के बाद पहुंच जाती है। पाँच कोपेक का टिकट खरीदो और जहाँ मन आए, घूमो। मास्को में आनेवाला कोई भी यात्री इस भूमिगत रेलवे को देखे बिना नहीं जाता।

मास्को में देखने को बहुत कुछ है, संग्रहालय, बड़े-बड़े बाग, दुनिया की सबसे ऊँची टेलिविजन-मीनार, नाट्य और नाटक गृह, आदि। लेकिन शुरू के दिनों में केवल यही दो स्थान देखे।

धीरे-धीरे मैं मास्को-निवास का अभ्यस्त होने लगा। रूसी भाषा से भी जानकारी प्राप्त करने लगा, रूसी लोगों के रहन-सहन से भी परिचित होने लगा। मुझे यह जानकर बड़ा सुखद आश्चर्य हुआ कि रूसी भाषा के अनेक शब्द संस्कृत भाषा जैसे ही हैं। अग्नि को रूसी में अगोन कहते हैं, द्वार को द्वेर, नभ को नेबो, मातृ को मात, भ्रातृ को ब्रात आदि। मुझे बताया गया कि ऐसे शब्द सैकड़ों की संख्या में मिलते हैं। शब्द ही नहीं, वाक्य-विन्यास भी बहुत कुछ मिलता-जुलता है।

एक दिन प्रातः मैं अपने कुछ भारतीय साथियों के साथ 'उक्राइना' नाम के विशाल होटल की ओर जा रहा था। हम सब लोग मास्को के विदेशी भाषा-प्रकाशन-गृह में अनुवादक के रूप में काम करते थे। हम बतियाते हुए चले जा रहे थ, सामने से एक वयोवृद्ध महिला आती हुई

दिखाई दी। हमने विशेष ध्यान नहीं दिया, पर हमारे पास आकर वे रुक गईं। हमारी ओर देखकर टूटी-फूटी अंग्रेजी भाषा में बोलीं:

"आप लोग हिन्दुस्तान से आए हैं, भारत के रहने वाले हैं ?"

"जी" हमने कहा।

"आप रवीन्द्रनाथ ठाकुर के देश के रहने वाले हैं। अहो भाग्य, आपसे मिलकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई"

और उन्होंने बारी-बारी से हम सबके साथ बड़े स्नेह से हाथ मिलाया। "मैंने रवीन्द्रनाथ ठाकुर की रचनाएँ पढ़ी हैं। मुझे भारत के लोगों से और भारत की संस्कृति से गहरा प्रेम है।" यह कहकर वे विदा हो गईं। तभी मैंने जाना कि दुनिया के लोगों को एक दूसरे के निकट लाने में, उन्हें स्नेह-सूत्र में बाँधने में महान लेखकों की रचनाओं का कितना बड़ा योगदान होता है।

कठिन शब्दार्थ

अनूठे — विचित्र। अभिभूत — वशीकृत। नश्तर — छोटा और तेज चाकू या छुरी। नश्तर लगाना — चीरना। सुन्न होना — निश्चेष्ट होना, स्तब्ध होना। पाँत — पंक्ति, कतार। दस्ताना— हाथ का मोजा, glove. कुमकुमा — bulb. परी — अप्सरा। संगमर्मर — marble. बतियाना — बातें करना।

व्याख्या करें :—

१. 'हाथ-पैर सुन्न हो रहे थे और मालूम होता था कि कान जैसे अभी कटकर अलग हो जाएँगे।'

२. 'तभी मैंने जाना कि दुनियाँ के लोगों को एक दूसरे के निकट में लाने में, उन्हें स्नेह सूत्र में बाँधने में महान लेखकों की रचनाओं का कितना बडा योगदान होता है।'

उत्तर लिखें :—

१. दिल्ली और मास्को के बीच लेखक ने क्या क्या देखा ?

२. मास्को की भूमिगत रेलवे की विशेषताएँ कौन-कौन हैं ?

३. विमान से बाहर निकलते ही लेखक ने क्या अनुभव किया और क्या देखा ?

बदला तो मैंने भी लिया था

मेजर ध्यानचंद

[मेजर ध्यानचंद (१९०५—१९७९) हाकी के जादूगर के नाम से विख्यात हैं। उन्होंने कई अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में भारतीय हाकी टीम को सफल नेतृत्व दिया था। विश्वभर में भारतीय हाकी को प्रतिष्ठा प्रदान करने में उनका योगदान महत्वपूर्ण रहा है। ध्यानचंद की कलाई की जादूगरी से प्रभावित होकर हिटलर ने उनकी बड़ी प्रशंसा की थी। एक साधारण सिपाही के रूप में भारतीय सेना में उनकी भर्ती हुई थी। बाद को मेजर के पद पर उनकी पदोन्नति हो गयी और पद्मभूषण की उपाधि से वे अलंकृत किये गये थे।

प्रस्तुत संस्मरण में ध्यानचंद के खिलाड़ी जीवन की कुछ रोमांचक घटनाओं का उल्लेख है, साथ ही, एक खिलाड़ी के रूप में उनके आदर्शों का पता चलता है।]

खेल के मैदान में आये दिन धक्कामुक्की और मारधाड़ की घटनाएं होती रहती हैं। खेल में तो यह सब चलता ही है। जिन दिनों हम खेला करते थे, उन दिनों भी यह सब चलता था। तो आओ मैं आज आपको अपने जीवन की एक दिलचस्प घटना सुनाता हूं।

सन् १९३३ की बात है। उन दिनों मैं पंजाब रेजीमेंट की ओर से खेला करता था।

एक दिन पंजाब रेजीमेंट और सैपर्स एंड माइनर्स टीम के बीच मुकाबला हो रहा था। माइनर्स टीम के खिलाड़ी मुझ से गेंद छीनने की कोशिश करते, लेकिन उनकी हर कोशिश बेकार जाती। इतने में एक खिलाड़ी ने गुस्से में आकर हाकी मेरे सिर पर दे मारी। मुझे मैदान से बाहर ले जाया गया।

थोड़ी देर बाद मैं पट्टी बांधकर फिर मैदान में आ पहुंचा। आते ही मैंने उस खिलाड़ी की पीठ पर हाथ रखकर कहा, 'तुम चिंता मत करो मैं इसका बदला जरूर लूंगा। मेरे इतना कहते ही वह खिलाड़ी एकदम घबरा गया। अब वह हर समय मुझे ही देखता रहता कि मैं कब उसके सिर पर हाकी मारने वाला हूं। मैंने एक के बाद एक झटपट छह गोल कर दिये। खेल खत्म होने के बाद मैंने फिर उस खिलाड़ी की पीठ थपथपायी और कहा—'दोस्त, खेल में इतना गुस्सा अच्छा नहीं लगता। मैंने तो अपना बदला ले ही लिया है। अगर तुम मुझे हाकी न मारते तो मैं तुम्हें शायद दो ही गोलों से हराता।' वह खिलाड़ी सचमुच बड़ा शर्मिंदा हुआ। तो देखा आपने मेरा बदला लेने का ढंग। सच मानो, बुरा काम करने वाला आदमी हर समय डरता रहता है कि उसके साथ भी बुराई की जायेगी।

आज मेरी उम्र लगभग ७२ वर्ष की है। जहां भी जाता हूं, छोटे-छोटे बच्चे अक्सर मुझे घेर लेते हैं और मुझसे मेरी सफलता का राज जानना चाहते हैं। मेरे पास सफलता का कोई गुरुमंत्र तो है नहीं। हर किसी से यही कहता हूं कि लगन, साधना और खेल-भावना यही सफलता के सबसे बड़े मंत्र हैं।

मुझे ही देखिए। मेरा जन्म १९०५ को प्रयाग में एक साधारण राजपूत परिवार में हुआ। बाद में हम झांसी आकर बस गये। १६ साल की उम्र में मैं 'फस्ट ब्रैहमिन रेजिमेंट' में एक साधारण सिपाही के रूप में भरती हो गया। उस समय तक मुझे खेल में कोई दिलचस्पी नहीं थी। लेकिन मेरी रेजिमेंट का हाकी के खेल में बहुत नाम था। उस समय हमारी रेजिमेंट के सूबेदार मेजर तिवारी थे। वह बार-बार मुझे हाकी खेलने के लिए कहते। हमारी छावनी में हाकी खेलने का कोई निश्चित समय नहीं था। सैनिक जब चाहे मैदान पहुंच जाते और अभ्यास शुरू कर देते। उस समय मैं एक नौसिखिया खिलाड़ी था।

जैसे-जैसे मेरे खेल में निखार आता गया, वैसे-वैसे मुझे तरक्की भी मिलती गयी। १९३६ में बर्लिन ओलिंपिक में मुझे टीम का कप्तान बनाया गया। उस समय मैं सेना में लांस नायक था। बर्लिन ओलिंपिक में लोग मेरे हाकी खेलने के ढंग से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने मुझे 'हाकी का जादूगर' कहना शुरू कर दिया। इसका यह मतलब नहीं कि सारे गोल मैं खुद ही करता था। मेरी तो हमेशा यह कोशिश रहती कि मैं गेंद को गोल के पास ले जाकर अपने किसी साथी खिलाड़ी को दे दूँ। ताकि उसे गोल करने का श्रेय मिल जाये। अपनी इसी खेल-भावना के कारण मैंने हिटलर तक का दिल जीत लिया था। लोग कहते हैं अपने किसी अधिकारी से यह पूछा था कि यह खिलाड़ भारतीय सेना में किस पद पर है। जब उसे यह मालूम हुआ कि मैं लांस नायक हूं तो उन्होंने अपने उस अधिकारी से कहा कि उससे कहो कि वह जर्मनी आ जाये, मैं उसे मार्शल बना दूंगा।

बर्लिन ओलिंपिक में हमें स्वर्णपदक तो मिला ही, लेकिन हिटलर ने अपनी ओर से मुझे एक पदक भी दिया था। इस से बड़ा गौरव का क्षण किसी खिलाड़ी केलिए और क्या हो सकता है।

अपने जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना और बताता हूं। १९३६ की बात है। बर्लिन ओलिंपिक हाकी के फाइनल में हमारा जर्मनी से मुकाबला था। मन में एक अजीब-सी वहशत थी। वहशत इसलिए भी थी कि हम एक अभ्यास मैच में जर्मनी से १-४ से हार चुके थे।

१५ अगस्त की सुबह टीम के सारे खिलाड़ी अपने 'ड्रेसिंग रूम' में इकट्ठे हुए। उस समय हमारी टीम के मैनेजर श्री पंकज गुप्ता थे। उन्हें खिलाड़ियों का हौसला बढ़ाने की अचानक एक तरकीब सूझी।

उन्होंने खिलाड़ियों के सामने तिरंगा झंडा रख दिया। मानो यह कह दिया हो कि अब इस झंडे की लाज तुम्हारे हाथ है। हम सभी खिलाड़ियों ने झुककर झण्डे को शाही सलामी दी। उसके बाद हम लोग उस झण्डे की लाज रखने केलिए मैदान में वीर सैनिकों की तरह उतरे। हम लोग जमकर खेले और ८-१ से विजयी हुए। उस दिन सचमुच तिरंगे झण्डे की लाज रह गयी। उस समय कौन जानता था कि १५ अगस्त ही भारत का स्वतंत्रता-दिवस बनेगा।

खेलते समय मैं हमेशा इस बात का ध्यान रखता था कि हार या जीत मेरी नहीं, बल्कि पूरे देश की है। हाकी तो आज भी मेरी रग-रग में समायी हुई है, पिछले कुछ वर्षों से मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। लेकिन इस पर भी मैं कभी-कभार बच्चों को खेलते हुए देखना चाहता हूं।

१९७३ की बात है। उन दिनों मेरी आंखों का इलाज हो रहा था। इधर डाक्टरों ने आराम करने का सलाह दी था। उधर आगरा में ध्यानचंद हाकी प्रतियोगिता चल रही थी। डाक्टरों के मना करने के बावजूद मैं फाइनल के दिन आगरा पहुंच गया। लोगों ने मुझे घेर लिया। कहने लगे—'दादा, आपको १० गज से ज्यादा दूर तो दिखायी ही नहीं देता फिर आप मैच का मजा कैसे लेते हैं।' इस पर मैंने कहा था कि हाकी का खेल तो मैं आंख बंद कर के भी देख सकता हूं। खिलाड़ियों की हलचल और दर्शकों की तालियों की आवाज से मुझे गेंद के हर मूवमेंट का पता चल जाता है।

आज मुझे अपनी या अपने परिवार की चिंता से ज्यादा भारतीय हाकी की चिंता है। लेकिन चिंता करने से होता ही क्या है। सवाल तो यह है कि जब दुनिया के अन्य देश हाकी के खेल में इतनी तरक्की कर सकते हैं तो हम क्यों नहीं कर सकते। भारत को तो दुनिया वाले जगद्गुरु कहते थे। दूसरों ने हमसे हाकी सीखी और हमसे आगे निकल गये।

कठिन शब्दार्थ

राज — रहस्य। छावनी — Cantonment. नौसिखिय — नया, जिसने हाल ही में सीखा हो। अजीब — विचित्र। दहशत — डर। हौसला — कामना, उत्साह। तरकीब — उपाय। शाही सलामी — royal salute. रग-रग में — नस-नस में।

व्याख्या करें:—

१ 'उस दिन सचमुच तिरंगे झंडे की लाज रह गयी। उस समय-कौन जानता था कि १५ अगस्त ही भारत का स्वतंत्रता-दिवस बनेगा।'

२. 'तुम चिंता मत करो, मैं इसका बदला ज़रूर लूँगा।'

३. 'बुरा काम करनेवाला आदमी हर समय डरता रहता है कि उसके साथ भी बुराई की जायेगी।'

उत्तर लिखें:—

१. ध्यानचंद ने अपने सिर पर हाकी मारनेवाले खिलाडी से कैसे बदला लिया था ?

२. हिटलर ने ध्यानचंद के बारे में क्या कहा था ?

३. ध्यानचंद क्यों 'हाकी के जादूगर' कहलाते थे ?

४. बर्लिन ओलिंपिक हाकी के फाइनल में भारत खिलाड़ी कैसे विजयी हुए ?

५. आँखों के अस्वास्थ्य के कारण कुछ दिखाई न देने पर भी ध्यानचंद हाकी मैच का मज़ा कैसे लेते थे ?

साक्षात् पशु

श्रीलाल शुक्ल

[आधुनिक हिन्दी व्यंग्यकारों में श्रीलाल शुक्ल का स्थान महत्वपूर्ण है। 'राग दरबारी' उनका उपन्यास है जिसे साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिला है। 'अंगद का पाँव' श्रीलाल शुक्ल के व्यंग्य लेखों का संग्रह है। उसमें आधुनिक जीवन की विडम्बनाओं को रोचक ढंग से चित्रित किया है।

शिकार कथा की शैली में लिखे गये प्रस्तुत व्यंग्य लेख में आधुनिक व्यक्ति की कायरता और प्रदर्शनप्रियता का कलात्मक चित्रण है।]

शिकार का शौक मुझे बचपन से था। पर यह मुझे मालूम न था। यह बाद में विल्सन के बताने पर जान पाया। तब मैं नैनीताल में था। वहीं एक दिन अकस्मात् विल्सन से मुलाकात हो गई। वह जंगल-विभाग का एक सम्मानित अधिकारी था। फिर तो हम दोनों की मित्रता हो गई, क्योंकि मैं भी जंगल-विभाग का एक सम्मानित अधिकारी था। एक दिन मुझे पता लगा कि विल्सन को शिकार का शौक है। उस दिन उसे भी पता लगा कि मुझे भी शिकार का शौक है। यह सब बड़ी आसानी से हो गया।

विल्सन को मैं प्रायः साफ-सुथरे कपड़े व कीमती सूट पहने देखता था। वह भड़कीली अमरीकन टाइयाँ लगाता था, जिनमें प्राकृतिक दृश्यों से लेकर फिल्मी तारिकाओं तक की तस्वीरें बनी रहती थीं। एक दिन मैंने देखा कि वह एक गन्दा खाकी कोट पहने है। एक पुरानी ब्रीचेज को निर्दयता से

चमड़े की पेटी के सहारे पेट पर बाँधे हुए है। मोटे और भारी बूट पैरों में हैं। चेहरे पर चार-पाँच दिन की बढ़ी दाढ़ी है। सर पर पुरानी हैट है जिसे फीते के सहारे ठुड्डी पर बाँध लिया गया है। टाँगें फैलाकर चल रहा है। आँखें लाल हैं। मुंह से सस्ती शराब की बदबू आ रही है। कन्धे पर राइफल लाठी की तरह रक्खे हुए है।

उसे इस रूप में देखकर मैं उत्साह से उछल पड़ा। बोला, "अरे, तुम तो पुराने शिकारी निकले। कहाँ से आ रहे हो ?"

उसने कहा —"शिकारी! तुम यह भी जानते हो ? मैंने अब तक पचासों टाइगर बैग किये होंगे? अभी-अभी तो मैं जंगल से आ रहा हूं और फिर जंगल को जा रहा हूं। साथ क्यों नहीं चलते ?"

उसी दिन शाम को लगभग चार बजे, हम अपनी-अपनी राइफलें लेकर जंगल में पहुँच गये। वह मेरा जाना-पहचाना जंगल था। हम लोग शेर मारने केलिए वहाँ घूम रहे थे। उस जंगल में चूँकि शेर न था इसलिए वहाँ घूमने में विशेष सुविधा थी।

इतने में एक झाड़ी बड़े जोर से हिली और तेजी से छलांग लगाता हुआ एक भयानक जानवर उससे बाहर निकला। घबराहट में विल्सन ने राइफल का कुन्दा उसकी ओर तान दिया; पर उसने एक और छलांग लगाई और दूसरी ओर जंगल में जाकर अदृश्य हो गया।

मुझे राइफल के कुन्दे की ओर देखते हुए देखकर उसने फिर कहा, "कभी-कभी नली के बजाय कुन्दा दिखाने से शेर पर इसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है वह कुन्दे को एक बहुत मोटी नली मानकर घबरा जाता है। इसीलिए मैंने उसे कुन्दा दिखाया था।"

"मैंने उसकी बात नहीं काटी, तो उसने स्वयं रुककर कुछ देर बाद कहा, "हो न हो, या वह शेर का बच्चा हो।"

तब मैंने विश्वास के साथ कहा, "नहीं विल्सन, यह शेर का बच्चा नहीं है। यह रैबिट है। मैंने लगभग पचास रैबिट बैग किये होंगे। पहला रैबिट मैंने विन्ध्या रेन्जेज में मारा था। तब मैं पन्द्रह साल का था।"

विल्सन ने कुछ भाव-सा करते हुए कहा, "रैबिट ? जिसे चौगड़ा या खरगोश कहते हैं ? यह जानवर तो पूरे उत्तरी भारत में पाया जाता है।"

मैंने बताया, 'जैसे भालू की किस्में होती हैं; काला भालू सफेद भालू वैसे ही रैबिट भी काला होता है, सफेद होता है, यहां तक कि भूरा भी होता है।"

सहसा उसने मेरे कन्धे पर हाथ मारकर कहा, "तो यह कहो पार्टनर, तुम तो पुराने शिकारी हो, पन्द्रह साल की उम्र से शिकार कर रहे हो।"

उस दिन मैंने अपने अतीत पर विचार किया तो ज्ञात हुआ कि लोग जैसे जन्म से मूर्ख होते हैं, जन्म से कवि होते हैं, वैसे ही मैं जन्म से शिकारी हूं।

दूसरे दिन हम लोग दूसरे जंगल में शिकार खेलने गये क्योंकि पहले दिन जिस जंगल में शेर नहीं मिल पाया वहां दुसरे दिन भी उसके होने का निश्चय न था।

प्यारे पाठको, इस कहानी को समझाने केलिए पहले आपको इस जंगल का भूगोल समझा दूं। इसके उत्तर और पश्चिम में पठारानुमा पहाड़ियाँ हैं, जिनकी ऊँचाई समुद्र-तट से सात सौ फुट है। दक्षिण के बायें भाग से

उत्तर के दाहिने भाग तक यानी पूर्व की ओर लगभग सात सौ फुट ऊँची दूसरी पहाड़ियाँ हैं और उत्तर के बायें भाग से दक्षिण की ओर यानी पश्चिम में लगभग सात सौ फुट ऊँची कुछ और पहाड़ियाँ हैं। बीच के भाग में भी पहाड़ियाँ हैं जो सात सौ फुट ऊँची हैं और जो उत्तर, दक्षिण, पूरब, पश्चिम की पहाड़ियों की ओर बराबर ऊँचाई से फैली हैं। इन पहाड़ियों में कोई घाटी नहीं है और सब मिलाकर इस स्थान को एक भयानक जंगल का रूप दे देती हैं। इसमें आम, जामुन से लेकर बांस, बबूल तक के पेड़ हैं और बीच बीच में झरबेरी, करौंदे और मकोय की भयंकर किन्तु छोटी झाड़ियां हैं। इनकी ऊँचाई इतनी कम है कि शेर इनमें बैठ नहीं सकता है। उसका पता लगाने केलिए शिकारी को हर झाड़ी के आगे लेटना पड़ता है। कभी-कभी शेर व शिकारी एक दूसरे को लेटे-लेटे देख लेते हैं पर स्थान की तंगी के कारण एक-दूसरे तक पहुंच नहीं पाते।

आप कह सकते हैं कि वह जंगल न था बल्कि आम और जामुन का मामूली-सा बाग था। पर बाग और जंगल में बड़ा अन्तर है। बाग वह है जो किसी योजना के अन्तर्गत लगाया जाता है; चूंकि यहाँ पर जितने पेड़ थे वे बिना किसी योजना के उगे थे या उगाये गये थे इसलिए आप चाहे जो कुछ कहें मैं तो इसे जंगल ही समझता था समझता हूं और समझता रहूंगा।

आज के दिन हम दोनों ने रबर के तल्ले वाले जूते पहन लिये थे। चलने में बिना कोई आवाज किये हम दोनों आगे बढ़ते गये। हमने पूरा जंगल छान डाला पर शेर का पता नहीं लगा। बात यह हुई कि रबर के तल्ले होने के कारण हमारे जूतों से आवाज नहीं हुई, इसी से शेर झाड़ियों में सोते ही रह गये। हमें जंगल के दूसरे किनारे पर अपनी भूल का अनुभव हुआ। इसलिए हम लोग उस दिन वापस लौट आये और दूसरे

दिन चमड़े के तल्ले वाले जूते पहनने का निश्चय किया ताकि शेर उनकी आवाज से जागकर सामने आ सकें।

तीसरे दिन एक स्थानीय शिकारी ने बताया कि एक गाय मारी हुई पाई गई है। उसे शेर ने मारा है और वह उस पर उसी दिन शाम को बैठने वाला है।

उस दिन जब हम चले तो हमारा दिल और जोर-जोर से धड़क रहा था क्योंकि हमारे मन में उत्साह तरंगें ले रहा था। विल्सन का चेहरा पीला पड़ गया था क्योंकि उसने सारी रात मारे उत्साह के बिना सोये ही बिताई थी। मुझे पसीना आ रहा था। जी नहीं, डर के मारे नहीं, बल्कि इसलिए कि आनन्द के कारण नसों पर तनाव पड़ने से रक्तचाप बढ़ गया था। हमारे हाथ काँप रहे थे क्योंकि हम में उल्लास था और हमारे पैर लड़खड़ा रहे थे, क्योंकि हम जल्दी चलने की कोशिश में थे।

हम लोग आज दूसरे रास्ते से गये ताकि देर से पहुँचें अर्थात् तब तक पहुँचें जब तक शेर 'किल' पर आ गया हो। यहाँ यह बता देना आवश्यक है कि मैं शिकारियों की इस थ्योरी से बिलकुल सहमत नहीं हूँ कि पहले से जाकर 'किल' पर शेर की प्रतीक्षा की जाय। बात यह है कि शेर और शायर कभी भी टाइम के पाबन्द नहीं हो सकते। यदि आप पूर्व निश्चित समय के अनुसार 'किल' पर पहुँच भी गये और शेर न पहुँचा तो व्यर्थ की निराशा होगी। इसलिए यह आवश्यक है कि आप अपना समय नष्ट न करें और शेर को पहले 'किल' पर पहुँचने दें। मैं अपने अनुभव से कह रहा हूँ ... .

खैर, यह तो कहानी के बाहर की बात है। उस दिन यही हुआ कि हम दूसरे रास्ते से 'किल' तक पहुँचने के लिए चले। रास्ते का नक्शा मेरे

हाथ में था जिसमें लाल निशान से उन जगहों को दिखाया गया था जहाँ शेर ने गायें मारी थीं और नीले निशान से आदमियों के मारे जाने का स्थान दिखाया गया था। वैसे नक्शे में लाल और नीली स्याही के निशान लगाने का अवसर अब तक न आया था। नक्शा न लाल था, न नीला बल्कि वह सफेद था और लाल और नीले निशान चिह्न समझाने वाली टिप्पणी में ही दिखाई पड़ते थे।

इस नक्शे में जंगल के बीच से काली लकीर द्वारा सीमेंट की सड़क और दोहरी काली लकीर में रेलवे लाइन भी दिखाई गई थी। सड़क के किनारे पार्क का चिह्न भी था। हालांकि हमें इस नक्शे का खास भरोसा न था क्योंकि पहले जब-जब इसके सहारे आगे चले तब तब हम घूम-फिरकर शहर ही में आ गये थे। फिर भी चूँकि हम शिकारी थे इसलिए नक्शा हमारे पास था और हम उसके सहारे चल रहे थे।

चलते-चलते, जंगल में पहुंचने के पहले, हमको एक दलदल पार करना पड़ता था। उस पर काई जमी थी। वहां हमें पैरों के चार छोटे-छोटे निशान दिखाई पड़े। यद्यपि स्थानीय शिकारी बताता रहा कि वे बकरी के पैरों के निशान हैं पर विल्सन ने जिद की कि वे शेर के पैरों के निशान हैं। उसने फीता निकालकर उनकी लम्बाई नापी और शेर के बारे में सब कुछ जान लिया। हिसाब लगाकर उसने बताया कि शेर नर है, मादा नहीं; उसकी उम्र पन्द्रह साल है, उसके अगले बायें पैर के घुटने में चोट है—बायाँ पैर लँगड़ाता है। उसकी लम्बाई दस फुट साढ़े ग्यारह इंच है, उसका रंग भूरा है, उसका रूप भयानक है उसका गुण घातक है, आदि आदि ... ... ।

इतने में कुछ अबाबीलें चहकीं। विल्सन ने बताया कि पांच मिनट पहले शेर वहां से निकलकर गया है क्योंकि अबाबीलें शेर के जाने के पांच मिनट बाद ही बोलती हैं।

हम और आगे बढ़े ही थे कि विल्सन अकस्मात् मुंह के बल जमीन पर लेट गया और कनखियों से पास की झाड़ी की ओर देखने लगा। मैंने समझ लिया कि झाड़ी में कोई जानवर मुंह के बल लेटा हुआ है।

अबाबीलें अब भी मेरे सर पर मंडरा रही थीं। मैंने एक अबाबील को पकड़कर अपनी जेब में रख लिया ताकि उसके बोलने पर मैं समझ सकूँ कि शेर हम से पाँच मिनट पहले निकल चुका है।

अब गाय के मरने की जगह लगभग सौ गज रह गई थी। मैं सावधानी से आसपास देखता हुआ बढ़ रहा था कि झाड़ी बड़े जोर से हिली और जब तक मैं अपना राइफल संभालूँ-संभालूँ तब तक शेर मेरे सामने आकर खडा हो गया।

प्यारे पाठको, इस दशा का विचार करो। मेरे चारों ओर कोई सहायक न था और सामने शेर मुंह फाड़ खड़ा था। मैंने फिर भी हिम्मत न हारी। सेफ्टीकैच को रिलीज करके मैंने राइफल की नली शेर के आगे कर दी और उसका घोड़ा दबा दिया। पर घोड़ा दबा ही नहीं। शायद कारतूस मैगजीन में फंस गया था।

शेर पहले चाहे डरा भी हो पर राइफल के बेकार होते ही उसके चेहरे पर खुशी की लहर दौड़ गई। शेर-शेर था। पर मैं भी मैं था। पर मैं कब तक मैं रह सकता था? सच तो यह है कि थोड़ी देर में मैं

थक गया। तब शेर ने मुझे नीचे गिरा दिया। नीचे गिराकर उसने मुझे मार डाला। मार चुकने पर वह मुझे खा गया।

यह बात अतिशयोक्ति में कही गई जान पड़ती है और अतिशयोक्ति है भी। सच बात तो यह है कि शेर ने मुझे मारा नहीं, न खाया ही। बल्कि जैसे ही वह मुझे मारने चला, मैंने उसका पांव पकड़ लिया और चीखकर कहा, "बाघ मामा, मुझे न मारो।"

शेर ने गरज कर कहा, "तू जब मेरा भांजा बन गया तो मैं सचमुच ही तुझे नहीं मार सकता। पर बोल, तू जिन्दा क्यों रहना चाहता है?"

मैंने कहा, "बाघ मामा, तुम्हारा यह फैला हुआ मुंह भला किस शिकारी को देखने को मिलता है? सब शिकारी तुमसे मिलने की डींग ही हांकते हैं। पर मैंने तो सचमुच तुमसे कुश्ती लड़ी है। तुम्हारा फैला हुआ मुंह देखा है। तुम मुझे नहीं जानते। मैं साहित्य का सेवक हूं। साहित्य सेवा की बात मरते दम तक न भूलूँगा। अपने यहां शिकार की कहानियों की कमी है। मैं जिन्दा रहकर इस घटना पर एक कहानी लिखना चाहता हूं। उसके बाद, हे बाघ मामा, मैं यहां आकर फिर ऐसे ही लेट जाऊँगा।"

यह सुनकर शेर ने कहा, "मैं शेर हूं तो तू बिलेर है। जा, जाकर कहानियाँ लिख।"

जब पांच मिनट बाद अबाबील मेरी जेब में चहकी तब मैंने आँखें खोलीं। मैं जमीन पर विल्सन से चार गज आगे पड़ा हुआ था। बहुत कल्पना करने पर ही शेर से भिड़न्त की बात याद आ सकी।

प्यारे पाठको, कहा जा सकता है कि इसमें भी अतिशयोक्ति है, पर अन्त में कुछ भी अतिशयोक्ति न हो तो क्या शिकार की कहानी किसी को अच्छी लगेगी ?

कठिन शब्दार्थ

भड़कीली — grand, stylish. फीता - tape. ठुड्डी — चिबुक, chin. कुन्दा — बन्दूक का पिछला चौड़ा भाग । किस्म — जाति । घोड़ा — trigger of a rifle. अबाबील — काले रंग की एक चिड़िया । दिलेर — वीर ।

व्याख्या करें :—

१. 'उस दिन मैंने अपने अतीत पर विचार किया तो ज्ञात हुआ कि लोग जन्म से मूर्ख होते हैं, जन्म से कवि होते है, वैसे ही मैं जन्म से शिकारी हूँ ।"

२. 'कभी-कभी शेर व शिकारी एक दूसरे को लेटे-लेटे देख लेते हैं; पर स्थान की तंगी के कारण एक-दूसरे तक पहुंच नहीं पाते ।'

३. 'बात यह है कि शेर और शायर कभी-कभी टाइम के पाबन्द नहीं हो सकते ।'

४. 'शेर-शेर था । पर मैं भी मैं था । पर मैं कब तक मैं रह सकता था ?'

उत्तर लिखें :—

१. विल्सन ने क्यों राइफल का कुन्दा तान दिया ?

२. शिकारी ने क्यों अबाबील को पकड़कर अपनी जेब में रख लिया ?

३. शिकारी जिन्दा क्यों रहना चाहता है ? उसने बाघ मामा से क्या कारण बताया ?

४. 'साक्षात् पशु' के लेखक ने आधुनिक व्यक्ति की क़ायरता और प्रदर्शनप्रियता को कैसे चित्रित किया है ।

आदमी का देवत्व

रामधारीसिंह 'दिनकर'

[रामधारीसिंह 'दिनकर' (१९०८—१९७४) हिन्दी के विख्यात कवि और गद्यकार हैं। उर्वशी (काव्य), कुरुक्षेत्र (काव्य), संस्कृति के चार अध्याय (गद्य) आदि उनकी प्रमुख रचनायें हैं। उर्वशी काव्य को ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला है। अत्यन्त सरल भाषा में लिखे हुए इस निबन्ध में उन्होंने स्पष्ट किया है कि आदमी कैसे देवत्व को प्राप्त कर सकता है। यह निबन्ध विचारोद्दीपक और शिक्षाप्रद है। अपने अन्दर छिपी हुई दिव्य शक्ति को न पहचानकर बाह्य शक्ति के भरोसे पर रहनेवाले आधुनिक युग के मनुष्य की मूर्खता भी इस में संकेत किया गया है।]

सृष्टि के आरंभिक दिनों की बात है। देवता कुछ-कुछ पुराने हो चले थे, किन्तु, आदमी बस अभी-अभी तैयार हुआ था, यहां तक कि उसके बदन की मिट्टी भी अभी ठीक से सूख न पायी थी। मगर, आदमी तो आरंभ से ही आदमी था। उसने इधर-उधर नजर दौड़ायी और देखा कि देवता छोटे हों या बड़े, उनकी इज्जत खूब है। फिर उसने अपनी ओर देखा और वह सोचने लगा कि देवताओं से, भला मैं किस बात में कम हूं। और तब भी लोग मुझे महज आदमी समझते हैं और कहते हैं कि मैं देवता नहीं हूं।

एक दिन जब ब्रह्मा को घेरकर सभी देवता बैठे हुए थे, आदमी भी वहां जा पहुंचा और सब के सामने उसने यह घोषण कर दी कि मिट्टी का

होने से मैं कुछ बिलकुल अपदार्थ नहीं हो गया। आज से आप लोग नोट कर लें कि किसी-न-किसी तरह का देवता मैं भी हूं।

देवताओं ने आदमी की घोषणा बड़े ही ध्यान से सुनी और सोच—समझ कर यह निर्णय दे दिया कि इसे देवता समझने में हमें कोई आपत्ति नहीं है।

मगर, आपत्ति उन्हें थी और यह निर्णय उन्होंने अपनी खुशी से नहीं दिया था। असल में, उन्हें मालूम था कि आदमी की रचना ब्रह्मा ने किन तत्वों से की है। वे स्वर्ग में यह बात सुन चुके थे कि ब्रह्मा जिस नये जीव की रचना कर रहे हैं, वह बड़ा ही उपद्रवी होगा। वह मिट्टी का होने पर भी समुद्र पर राज करेगा, बिना पंख का होने पर भी आकाश में उड़ेगा और जो ताकतें पहाड़ और वन को हिलाती रहती हैं, धरती और जंगल को जलाती रहती हैं, और जिनकी चिंघाड़ से स्वर्ग भी कांपने लगता है, वे सब इसके कब्जे में रहेंगी। समुद्र में जो रत्न हैं, वन में जो फल और जीव हैं तथा धरती के भीतर जो धन हैं, उन सब का उपभोग इस नये प्राणी केलिए सुरक्षित रखा गया है। यही नहीं, बल्कि, देवता जिसे सूंघकर रह जाते हैं, उसे यह नया जीव हाथ से छू सकेगा दांतों से चबाकर अपने उदर में डाल सकेगा और इस प्रकार जिन चीजों को देखकर देवता ललचाकर रह जाते हैं, वे चीजें आदमी के लहू में समा जायँगी, मन और बुद्धि में जा बसेंगी, सांस का सौरभ बन जायँगी।

और, यद्यपि, यह मरनेवाला होगा, मगर, बड़े-बड़े अमर इसके भय से भागते फिरेंगे। नहीं तो एक दिन यह उन्हें पकड़कर चटसाल में भरती कर सकता है।

देवताओं ने सोचा, अरे, तब तो यह हमारा भी गुरु निकलेगा।

देवता आरंभ से ही आदमी से डरे हुए थे, इसलिए आदमी ने जब यह कहा कि एक तरह का देवता मैं भी हूँ तब वे उसके इस दावे को झुठला नहीं सके। मगर, वे छिपे छिपे इस घात में लगे रहे कि इस नये जीव को बेबस कैसे किया जाय।

निदान, यह निश्चित हुआ कि आदमी का देवत्व चुरा लिया जाय। और इस विचार के आते ही देवता खुशी से उछल पड़े। और सोये हुए आदमी का देवत्व चुराकर देवताओं ने उसे अपने पास कर लिया।

लेकिन, फिर तुरंत उनका चेहरा उतर गया क्योंकि एक देवता ने सवाल किया, "अगर आदमी इतना धूर्त और सयाना है, इतना प्रतापी और शक्तिशाली है तो फिर उसका देवत्व चुराकर रखा कहां जायगा? आकाश और पाताल, आदमी तो दोनों जगह घूमेगा। रह गयी धरती उस पर तो आदमी का रात-दिन का वास हैं। और अगर यह कहो कि कोई देवता उसे अपनी मुट्ठिया में बन्द किये रहे, तो हम में से ऐसा कौन है जो इस नये जीव से दुश्मनी मोल ले? कह ऐसा न हो कि क्रोध में आकर आदमी स्वर्ण पर ही धावा बोल दे!"

देवताओं को उदास देखकर ब्रह्मा बोले, "अच्छा, लाओ आदमी का देवत्व मेरे हाथ में दे दो।"

देवत्व ब्रह्मा के हाथ में आया। उन्होंने अपनी मुट्ठी बन्द की और फिर चीज उसमें से गायब हो गया। देवता दंग रह गये।

तब ब्रह्मा ने कहा, "चिन्ता न करो! मैंने आदमी के देवत्व को एक ऐसी जगह पर छिपा दिया है, जहां उसे खोजने की बात आदमी को कभी सूझेगी ही नहीं। मैंने यह प्रकाश स्वयं उसी के हृदय में छिपा दिया है।

कठिन शब्दार्थ

महज — केवल । पंख — पक्ष । कब्जा — वश, अधीनता ।
लोहू — रक्त । चटसाल — पाठशाला । बेबस — विवश ।

व्याख्या करें:—

१. भला, मैं किस बात में कम हूं ... ... मैं देवता नहीं हूं ।
२. वह मिट्टी का होने पर भी ... ... उसके कब्जे में रहेंगी ।
३. चिंता न करो ... ... हृदय में छिपा दिया है ।

उत्तर लिखें:—

१. मिट्टी का होने पर भी आदमी देवताओं की अपेक्षा किन किन बातों में बड़ा है ?
२. 'आदमी से देवता भीं डरते थे', इसका कारण स्पष्ट करें।
३. आदमी का देवत्व कहाँ छिपा है—? उसे कैसे पाया जा सकता है ?
४. 'आदमी का देवत्व' हमें कौन सा सन्देश देता है ?

उपग्रहों के उपयोग

डा. जगदीश लूथरा

[डा. जगदीश लूथरा, ट्राम्बे के भाभा परमाणु अनुसन्धान केन्द्र के रसायन विभाग के वैज्ञानिक अधिकारी हैं। उनका जन्म ३ नवंबर १९३५ को पाकिस्थान स्थित साहीवाल में हुआ था। कुछ समय तक जोधपुर विश्वविद्यालय के जसवंत कालिज में व्याख्याता रहे। अमेरिका में भी कुछ समय तक वैज्ञानिक शोध में संलग्न थे। हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के सृजन में वे व्यस्त हैं। भारत की कई प्रमुख पत्रिकाओं में उनके अनेक वैज्ञानिक लेख प्रकाशित हुए हैं। परमाणु ऊर्जा विभाग की त्रैमासिक पत्रिका "परमाणु" के संपादन मण्डल में वे सदस्य है। उनका प्रस्तुत लेख वैज्ञानिक साहित्य की रचना में उनकी अभिरुचि प्रकट करता है।]

हजार से ज्यादा उपग्रह अभी तक छोड़े जा चुके हैं। इसमें से कई खत्म हो चुके हैं, कई अभी कार्यरत हैं, और कई तो अन्तरिक्ष की गहराइयों में भटक गये हैं। उपग्रह भेजने का सिलसिला अभी जारी है और आगे भी जारी रहेगा। सवाल उठता है कि यह सारा प्रयास किसलिए?

अन्तरिक्ष में घूमता हुआ उपग्रह एक प्रकार से मंच का कार्य करता है। उस ऊंचाई से वह पृथ्वी का अवलोकन ऊपर से करता है और जानकारी इकट्ठा करके उसे पृथ्वी पर भेजता है। ज्यादातर उपग्रह मानव-रहित होते हैं, परंतु उनके पास मशीनी आँखें होती हैं। ये मशीनी आँखें असल मे विशेष उपकरण हैं, जो पृथ्वी के बारे में जानकारी प्राप्त

करते हैं और उसे टेलिमीटरी विधि (दूरमापी) से पृथ्वी पर भेजते हैं। इन सूचनाओं को इकट्ठा करने केलिए पृथ्वी पर भू-स्टेशन होते हैं। टेलिमीटरी का सबसे सरल उदाहरण है मोटर-कार में लगा हुआ रफ्तार बतानेवाला मीटर। उसकी मदद से ड्राइवर कार में बैठे बैठे ही पता लगा सकता है कि कार का पहिया किस रफ्तार से गति कर रहा है।

उपग्रहों के अलग अलग उद्देश्य होते हैं और उसी के अनुसार उनका वर्गीकरण किया जाता है। उदाहरण केलिए संचार-उपग्रह का उद्देश्य संचार-संबंधी कार्य करना है, वैज्ञानिक उपग्रह का उद्देश्य है वैज्ञानिक जानकारी जुटाना अर्थात् पृथ्वी की सही आकृति, अंतरिक्ष में उपस्थित विविध विकिरण, सौर ऊर्जा, जीवन पर भारहीन अवस्था का प्रभाव इत्यादि की जानकारी प्राप्त करना; फौजी उपग्रह का काम है दुश्मन के सामरिक प्रतिष्ठानों, फ़ौजी जमावों एवं उनकी हलचल आदि भेदों का पता लगाना और उनकी सूचना देना; और मार्ग-निर्देशक उपग्रह का लक्ष्य है नौचालन में सहायता प्रदान करना।

टाइरस और निम्बस नामक मौसम उपग्रहों वैज्ञानिक अध्ययन में काफी प्रगति हुई है। इनका मुख्य कार्य था मौसम विज्ञान केलिए आवश्यक जानकारी जुटाना-बादलों के चित्र लेना, समुद्री तरंगों का अध्ययन करना, भूमि के तापक्रम इत्यादि के बारे में आंकड़े इकट्ठे करना ताकि मौसम की सही भविष्यवाणी की जा सके।

मौसम के बारे में जानकारी प्राप्त करना इतना महत्वपूर्ण क्यों है? हर रोज आकाशवाणी पर खबरों के अंत में 'अब मौसम का हाल सुनिए' कहकर 'गरज के साथ छींटें पड़ने' आदि की बातें क्यों बता जाती हैं।

हमारा देश कृषि प्रधान है। जुताई बुआई सिंचाई, कटाई आदि कृषि-कार्यों का मौसम से गहरा संबंध है। अगले चौबीस घंटों के मौसम की जानकारी किसान को पहले से हो तो वह उसके अनुसार कार्यक्रम बना सकता है।

वायुयान-चालकों को भी मौसम का हाल थोड़ी-थोड़ी देर में बताया जाता रहता है, ताकि अचानक आँधी, तूफान, कोहरे आदि में फसकर भटकने या दुर्घटनाग्रस्त होने से वे वायुयानों को बचा सकें।

मौसम-विज्ञान तेजी से उन्नति कर रहा है। कुछ वर्षों में मनुष्य मौसम के बारे में लगभग सही भविष्यवाणी करने में समर्थ हो जायगा। इस में उपग्रह बहुत सहायक होंगे। तब मौसम-समाचार आज की तरह कार्टूनों का विषय नहीं रह जाएंगे।

समाचार और सन्देश भेजने के साधन आज बहुत विकसित हो चुके हैं; इनमें उपग्रहों ने भी काफी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। कुछ ही साल पहले टेलिविजन चित्र ५० मील से ज्यादा दूर नहीं भेजे जा सकते थे; अब टोक्यो से प्रसारित टेलिविजन कार्यक्रम न्यूयार्क में देखा जा सकता है। यह उपग्रह की कृपा से ही हुआ है।

विश्व के अन्य भागों से प्रेषित टेलिविजन चित्रों को हम क्यों नहीं देख पाते थे? बात यह है कि टेलिविजन तरंगें (टी. वी. तरंगें) काफी लंबी होती है और सीधी रेखा में चलती हैं। मगर पृथ्वी है गोल, इसलिए ये तरंगें पृथ्वी पर बहुत दूर तक नहीं जा पातीं और इसीलिए टी. वी. चित्र बहुत दूर तक नहीं भेजे जा सकते।

टी. वी. तरंगें रेडियो की तरंगों से भिन्न होती हैं। दूर देशों में जब रेडियो पर समाचार (रेडियो-संदेश) भेजे जाते हैं तो वे किस प्रकार पृथ्वी की गोलाई के बावजूद ग्रहण किये जा सकते हैं? सन् १९२० में ओलिवर हेविसाइड ने यह पता लगाया कि पृथ्वी से करीब ६० मील ऊपर आकाश में एक आयनित स्तर है, जिसे आयन-मण्डल कहते हैं। जब रेडियो-तरंगें वहां पहुंचती हैं, तो उससे टकराकर पृथ्वी पर वापस आती हैं।

इसी कारण छोटी तरंगें सुदूर देशों में पहुंच जाती हैं। परन्तु तरंगों को लौटाने के मामले में आयन-मण्डल पर बहुत भरोसा भी नहीं किया जा सकता। टी. वी. तरंग आदि माको-तरंगें भी सीधी रेखा में चलती हैं; परन्तु वे आयन-मण्डल से टकराकर वापस नहीं लौटतीं, बल्कि उसके पार चली जाती हैं।

इसलिए क्षितिज के पार टी. वी. तरंगों को भेजनें केलिए हमें रिपीटर (दोहरानेवाले) स्टेशनों की आवश्यकता पड़ती है। ये स्टेशन काफी ऊँचे टेलिविज़न-स्तंभ से प्रसारित की गयी टी. वी. तरंगों को पकड़कर फिर से प्रसारित करते हैं। दो रिपीटर के बीच की दूरी ५० से ८० किलोमीटर तक होती है।

यह व्यवस्था धरती पर कुछ सौ किलोमीटर तक आसानी से काम कर सकती है। परन्तु यदि हम पेरिस से न्यूयार्क को टी. वी. तरंगें भेजना चाहें, तो यह व्यवस्था काम नहीं दे सकती। क्योंकि इसकेलिए हमें ६५० किलोमीटर ऊँची मीनार बनानी पड़ेगी, जो कि असंभव है। यों भी पेरिस और न्यूयार्क के बीच अटलांटिक महासागर पड़ता है, उसमें सैकड़ों रिपीटर स्टेशन बनाना बहुत कठिन और बेहद खर्चीला काम होगा।

लेकिन उपग्रह ये सब समस्याएं सुलझा देता है। उपग्रह एक तरह से हवा में लटकती हुई मीनार है। उसकी सहायता से कई स्थानों से एक साथ संबंध स्थापित किया जा सकता है। एक लाभ उसमें यह भी है कि उसका स्थान भी बदला जा सकता है।

संचार-उपग्रह दो प्रकार के होते हैं—१. दोहराने वाले (रिपीटर) २. लौटानेवाले (परावर्तक)। दोहरानेवाले (रिपीटर) उपग्रहों में रीसीवर (ग्राहक) और ट्रांसमीटर (प्रेषक) दोनों रहते हैं। परन्तु लौटानेवाले (परावर्तक) उपग्रहों में कोई विशेष उपकरण नहीं होते। उनका काम तो तरंगों का वापस भेजना मात्र है। उनसे वापस आनेवाली ये तरंगें सब दिशाओं में फैल जाती हैं और टेलिविजन सेट उन्हें ग्रहण करते हैं।

कठिन शब्दार्थ

सवाल उठना — प्रश्न उठना। असल में — वास्तव में। रफ्तार— चाल, गति। सौर ऊर्जा — सूर्य से प्राप्त शक्ति। फौजी — सैनिक। प्रतिष्ठान — स्थान। जमाना — जड़ मजबूत करना, जमने में सहायक होना। हलचल — दौड़धूप, शोरगुल आदि; खलबली। नौचालन — Navigation, shipping. जुताई — जोतने का काम। बुआई — बोने का काम। तूफान — आंधी। कोहरा — Mist. आयनित — Ironized माक्रो-तरंग — Mycro waves क्षितिज — horizon. खर्चीला — Expensive, प्रसारित — extended, propagated प्रेषित — L'espatched, transmitted. बेहद — हद से ज्यादा, असीम। संचार-उपग्रह—communication satellite

व्याख्या करें :—

१. तब मौसम-समाचार आज की तरह कार्टूनों का विषय नहीं रह जाएँगे ।

२ उपग्रह एक तरह से लटकती हुई मीनार है ।

उत्तर लिखें :—

१ भूस्टेशन का क्या उपयोग है ?

२. उपग्रह कितने प्रकार के होते हैं । मौसम उपग्रहों के बारे में आज क्या जानते हैं ?

३. संचार उपग्रहों का संक्षेप में वर्णन करें ।

४. 'उपग्रहों के उपयोग' नामक लेख का सारांश लिखें ।

'आप भले, जग भला'

श्रीमन्नारायण

[श्रीमन्नारायण (१९१२–१९७८) स्वतंत्रता संग्राम के सेनानी और राजनीतिज्ञ थे। वे गांधीजी के अनुयायी थे। गांधीवाद के विशेषज्ञों में उनकी गणना थी। देश की उन्नति केलिए उन्होंने निरन्तर प्रयत्न किया था। हिन्दी साहित्य के विकास में भी उनका योगदान महत्वपूर्ण रहा है।

प्रस्तुत लेख में वे स्पष्ट करते हैं कि दुनियाँ को हम जो देंगे वही हमको मिलेगा; अतः हमें स्वयं सुधरना चाहिए।]

एक विशाल काँच के महल में न जाने किधर से एक भटका हुआ कुत्ता घुस गया। हजारों काँचों के टुकड़ों में अपनी शक्ल देखकर वह चौंका। उसने जिधर नजर डाली, उधर ही हजारों कुत्ते दिखाई दिए। वह समझा कि ये सब उस पर टूट पड़ेंगे और उसे मार डालेंगे। अपनी भी शान दिखाने केलिए वह भौंकने लगा, उसे सभी कुत्ते भौंकते हुए दिखाई पड़े। उसकी ही आवाज की प्रतिध्वनि उसके कानों में जोर-जोर से आती। उसका दिल धड़कने लगा। वह और जोर से भौंका। सब कुत्ते भी अधिक जोर से भौंकते दिखाई दिए। आखिर वह उन कुत्तों पर झपटा, वे भी उस पर झपटे। बेचारा जोर-जोर से उछला कूदा, भौंका और चिल्लाया। अन्त में वह थक कर गिर पड़ा।

कुछ देर बाद उसी महल में एक दूसरा कुत्ता आया। उसको भी हज़ारों कुत्ते दिखाई दिए। वह डरा नहीं, प्यार से उसने अपनी दुम हिलाई। सभी कुत्तों की दुम हिलती दिखाई दी। वह खूब खुश हुआ और कुत्तों की ओर अपनी पूँछ हिलाता बढ़ा। सभी कुत्ते उसकी ओर दुम हिलाते बढ़े। वह प्रसन्नता से उछला कूदा, अपनी ही छाया से खेला, खुश हुआ और फिर पूँछ हिलाता बाहर चला गया।

जब मैं अपने एक मित्र को हमेशा परेशान, नाराज़ और चिड़चिड़ाते देखता हूँ तब इसी किस्से का स्मरण हो जाता है। मैं उसकी मिसाल भौंकनेवाले कुत्ते से नहीं देना चाहता। यह तो हद दर्जे की बदतमीज़ी होगी। पर इस कहानी से वे चाहें तो कुछ सबक ज़रूरी सीख सकते हैं।

यह दुनिया एक काँच के महल जैसी है। अपने स्वभाव की छाया ही उस पर पड़ती है। 'आप भले तो जग भला, आप बुरे तो जग बुरा'। अगर आप प्रसन्नचित्त रहते हैं दूसरों के दोषों को न देखकर उनके गुणों की ही ओर ध्यान देते हैं तो दुनिया भी आपसे नम्रता और प्रेम का बर्ताव करेगी। अगर आप हमेशा लोगों के ऐबों की ओर देखते हैं उन्हें अपना शत्रु समझते हैं और उनकी ओर भौंका करते हैं तो फिर वे क्यों न आपकी ओर गुस्से से दौड़ेंगे? अंग्रेज़ी में भी एक कहावत है कि अगर आप हँसेंगे तो दुनिया भी आपके साथ हँसेगी, पर अगर आपको गुस्सा होना और रोना ही है तो दुनिया से दूर किसी जंगल में चले जाना हितकर होगा।

अमेरिका के मशहूर नेता अब्राहम लिंकन से किसी ने एक बार पूछा, "आपकी सफलता का सबसे बड़ा रहस्य क्या है?"

उन्होंने जरा देर सोचकर उत्तर दिया "मैं दूसरों की अनावश्यक नुक्ताचीनी कर उनका दिल नहीं दुखाता !"

इसी तरह के प्रश्न का उत्तर देते हुए हेनरी फोर्ड ने कहा था, "मैं हमेशा दूसरों के दृष्टिकोण को समझने की कोशिश करता हूँ।"

मेरे मित्र की यही खास गलती है। वे दूसरों का दृष्टिकोण समझने की कोशिश नहीं करते। दूसरों के विचारों की, कामों की, भावनाओं की आलोचना करना ही अपना परम धर्म समझते हैं। उनका शायद यह ख्याल है कि ईश्वर ने उन्हें लोगों को सुधारने केलिए ही भेजा है। पर वह यह भूल जाते हैं कि शहद की एक बूंद ज्यादा मक्खियों को आकर्षित करती है, बजाय एक सेर जहर के।

दुनिया में पूर्ण कौन है ? हरेक में कुछ-न-कुछ त्रुटियाँ रहती हैं, प्रत्येक व्यक्ति से गलतियाँ होती हैं। फिर एक-दूसरे को सुधारने की कोशिश करना अनुचित ही समझना चाहिए। जैसा ईसा ने कहा था, "लोग दूसरों की आँखों का तिनका तो देखते हैं, पर अपनी आँख के शहतीर को नहीं देखते"। दूसरों को सीख देना तो बहुत आसान काम है, अपने ही आदर्शों पर स्वयं अमल करना कठिन है।

अगर हम अपने को ही सुधारने का प्रयत्न करें और दूसरों के अवगुणों पर टीका-टिप्पणी करना बन्द कर दें तो हमारे मित्र जैसा हमारा हाल कभी नहीं होगा। अगर हमारा जीवन चमकती रोशनी की तरह आकर्षक होगा तो सैकड़ों-हजारों परवाने बरबस एकत्र होंगे और हमारे जरा से इशारे पर बड़ी-से-बड़ी कुरबानी करने केलिए तयार रहेंगे। पर अंधेरे की ओर कौन खिंचता है ? वहां तो ठोकर खाकर गिर जाने की ही अधिक सम्भावना होगी।

हाँ, इसी सिलसिले में एक बात और। आप तो दूसरों की नुक्ताचीनी नहीं करेंगे, ऐसी उम्मीद है, पर दूसरे ही अगर आपकी नुक्ताचीनी करना न छोड़ें तो ? मेरे मित्र अपनी बुराई या आलोचना सुनकर आगबबूला हो जाते हैं, भले ही वह दुनिया की दिनभर बुराई करते रहें। पर आपके लिए तो ऐसे मौके पर दादू की पंक्तियाँ गुनगुना लेना बड़ा कारगर होगा :

निंदक बाबा वीर हमारा
बिनहीं कौड़ी वहै बिचारा।
आपन डूबे और को तारे
ऐसा प्रीतम पार उतारे।

अगर सचमुच कुछ त्रुटियाँ हैं, जिनकी ओर 'निंदक' हमारा ध्यान खींचता है तो उन अवगुणों को दूर करना हम सभी का कर्तव्य हो जाता है। जिसने उनकी ओर ध्यान दिलाया, उसका उपकार ही मानना चाहिए। एक दिन एक सज्जन से कुछ गलती हो गई। हमारे मित्र तुरंत बिगड़कर बोले:

"देखिए महाशय, यह आपकी सरासर गलती है। आइंदा ऐसा करेंगे तो ठीक नहीं होगा।" बेचारे महाशयजी बड़े दुखी हुए। उनका पूरा अपमान हो गया। मन में क्रोध जाग्रत हुआ और वे बिना कुछ उत्तर दिए ही उठकर चले गए। दूसरे दिन मैंने उनसे एकांत में कहा, 'देखिए, गलती तो सभी से होती है, ऐसी गलती मैं भी कर चुका हूँ। दुखी होने का कारण नहीं। आप तो बड़े समझदार हैं। कोशिश करें तो यह क्या, बड़ी से बड़ी गलतियाँ सुधारी जा सकती हैं। ठीक है न?"

उनकी आँखों में आँसू छलछला आए। बड़े प्रेम से बोले 'जी हाँ, मैं अपनी गलती मानता हूँ। आगे भला मैं वही गलती क्यों करने लगा!

पर कोई मुहब्बत से पेश आए तब न! आदमी प्रेम का भूखा रहता है केवल रोटी का नहीं।"

थोड़े से मीठे शब्दों ने अपना काम तुरंत कर दिया अपने व्यवहार में मिठास लाने के लिए एक कौड़ी भी तो खर्च नहीं होती, पर करोड़ों दिलों को जीता जा सकता है। सभी के दिल हमारे जैसे ही हैं। किसी दूसरे व्यक्ति का दिल दुखाना, उससे कड़वा बोलना सज्जन को शोभा नहीं देता।

जब सरदार पृथ्वीसिंह ने हिंसा का मार्ग त्यागकर अपने को बापू के सामने अर्पण कर दिया तब बापू को बहुत खुशी और संतोष हुआ। पर बापू जहाँ प्रेम और सहानुभूति की मूर्ति थे, वहाँ बड़े परीक्षक भी थे। कुछ दिनों बाद उन्होंने पृथ्वीसिंह से कहा, "सरदार साहब, अगर आप सेवाग्राम में आकर मेरे आश्रम में का ... से रह सकें तभी मैं समझूँगा कि आपने अहिंसा का पाठ सचमुच सीख लिया है।"

पृथ्वीसिंह जरा चौंककर बोले, 'आपका क्या मतलब बापूजी?"

"भाई, मेरा आश्रम तो एक प्रयोगशाला जैसा ही है। जिन लोगों की कहीं नहीं बनती, अक्सर वे मेरे पास आ जाते हैं। उन सबको एक साथ रखने में मैं सीमेंट का काम करता हूं, और वह सीमेंट मेरी अहिंसा ही है।"

"मैं समझ गया, बापूजी!' पृथ्वीसिंह ने मुस्कराकर कहा। आगे की कहानी यहाँ कहने की जरूरत नहीं पर इसमें बापू के प्रेममय व्यवहार की एक झलक मिल जाती है उन्होंने अपने प्रेम और सहानुभूति से कितने ही व्यक्तियों को अपनी ओर खींचा था। बापू कड़ी-से-कड़ी

आलोचना कर सकते थे और करते भी थे, पर हँसकर, मीठी चुटकियाँ लेकर, अपना प्रेम दर्शाकर।

अमेरिका के मशहूर लेखक इमर्सन की एक घटना याद आती है। उन्हें गायें पालने का शौक था। इसलिए गायें और नन्हें बछड़े उनके मकान के पास एक कुटी में रहते थे। एक बार जोर की बारिश आने वाली थी। सभी गाएँ तो झोंपड़ी के अंदर चली गईं, पर एक बछड़ा बाहर ही रह गया। इमर्सन और उनका लड़का दोनों मिलकर उस बछड़े को पकड़ कर खींचने लगे कि वह कुटी में चला आए, पर ज्यों-ज्यों उन्होंने जोर से खींचना शुरू किया त्यों-त्यों वह बछड़ा भी सारी ताकत लगाकर पीछे हटने लगा। बेचारे इमर्सन बड़े परेशान हुए। इतने में उनकी बुड्ढी नौकरानी इधर से निकली। जैसे ही उसने यह तमाशा देखा, वह दौड़ी आई और अपना अँगूठा बछड़े के मुँह में प्यार से डालकर उसे झोंपड़ी की तरफ़ ले जाने लगी। बछड़ा चुपचाप कुटी के अन्दर चला गया।

वह अनपढ़ नौकरानी किताबें और कविताएँ लिखना नहीं जानती थी, पर व्यवहार-कुशल अवश्य थी और जब जानवर भी प्रेम की भाषा समझते हैं तो फिर मनुष्य क्योंकर न समझेंगे ?

कल हमारे मित्र का रसोइया भी बिना खबर दिए ही चलता बना। बेचारा करता भी क्या ! सुबह से शाम तक उसको महाशय की डाँट खानी पड़ती थी "तूने आज दाल बिल्कुल बिगाड दी। उसमें नमक बहुत डाल दिया।" "अरे बेवकूफ तूने साग में नमक ही नहीं डाला।" "यह जली रोटी कौन खाएगा रे !" इत्यादि की झड़ी लगी रहती थी। जब कोई चीज जरा भी बिगड़ जाती तब तो उसे दिल खोलकर डाँटा जाता।

पर अच्छा भोजन बनने पर कभी भी तारीफ़ के दो शब्द न बोले जाते। "वाह! तारीफ़ कर देने से उसका दिमाग चढ़ जाएगा।" मेरे मित्र कह देते। ठीक है! तो वह भी आदमी है। उसके भी दिल है। बेचारा कुछ रुपए का नौकर यन्त्र नहीं बन सकता। तंग आकर भाग जाने के सिवा और क्या चारा था?

कहने का मतलब यह कि उनकी किसी से नहीं बनती—न मित्रों से न आफिस के कर्मचारियों से, और न घर के नौकरों से। भगवान की दया से उनके कोई बच्चा नहीं है, नहीं तो उस बेचारे की भी पूरी शामत ही थी। उनका कहना है कि बच्चों को प्रारंभ से ही डाँट-डपटकर रखना चाहिए, प्यार करने से वे बिगड़ जाते हैं। पर ईश्वर गंजों को नाखून नहीं देता, यही कुशल है।

उस पर भी मजा यह है कि वे अपनी जिन्दगी और विचारों से पूरी तरह संतुष्ट हैं। वे मानते हैं कि उनका जीवन, आचार और विचार आदर्श हैं। दूसरे लोग, जो उनका सम्मान नहीं करते, मूर्ख हैं।

ग्रीस के महान् संत सुकरात ने एक बात बड़े मार्के की कही थी, "जो मनुष्य मूर्ख है और जानता है कि वह मूर्ख है, वह ज्ञानी है, पर जो मूर्ख है और नहीं जानता कि वह मूर्ख है वह सबसे बड़ा मूर्ख है।"

अच्छा हो, मेरे मित्र सुकरात के इस विचार को अपने कमरे में लिखकर टाँग लें। पर उनसे यह कहने का साहस कौन करे?

कठिन शब्दार्थ

गश खाना – बेहोश होना । किस्सा — कथा । मिसाल — उदाहरण । हद दर्जे की बदतमीज़ी — सबसे बडी अशिष्टता । ऐब — दोष । नुक्ताचीनी — दोष निकालना । शहतीर — Stick. परवाना - प्रमाण, आज्ञा पत्र । आगबबूला होना — अत्यधिक क्रुद्ध होना कारगर — उपयोगी । शामत — दुर्गति ।

व्याख्या करें:—

१. 'उनका शायद यह ख्याल है कि ईश्वर ने उन्हें लोगों को सुधार केलिए ही भेजा है ।'
२. 'लोग दूसरों की आँखों का तिनका तो देखते हैं, पर अपने आँख के शहतीर को नहीं देखते '
३. 'अच्छा हो, मेरे मित्र सुकरात के इस विचार को अपने कमरे में लिखकर टाँग लें ।'

उत्तर लिखें :—

१. काँचमहल में प्रवेश करनेवाले दोनों कुत्तों के व्यवहार में क्या अतर था ?
२. लेखक को कब कुत्ते का किस्सा स्मरण हो जाता है ? क्यों ?
३. इमर्सन ने अनपढ नौकरानी से कौन-सा पाठ पढा ?
४. लोग गाँधीजी की ओर क्यों आकृष्ट हो जाते थे ?

माता—पिता

विष्णु प्रभाकर

[श्री विष्णु प्रभाकर का जन्म सन् १९१२ में मुज़फ्फ़रपुर जिले के मीरपुर गांव में हुआ। बी० ए० तक शिक्षा प्राप्त करके पंजाब सरकार के अन्तर्गत कृषि विभाग में कार्य करने लगे। नौकरी करते हुए आपने कहानी लेख आदि लिखना प्रारंभ किया। थोडे दिनों के बाद नौकरी से त्यागपत्र देकर पूर्ण रूप से साहित्य रचना में लग गये।

हिन्दी एकांकी नाटकों के उन्नायकों में आपका नाम विशेष आदर के साथ लिया जाता है। अभिनेयता की दृष्टि से आपके एकांकी नाटक अत्यन्त सरल हैं। श्री विष्णु प्रभाकर के नाटकों में जीवन के यथार्थ चित्र मिलते हैं, कला की दृष्टि से भी ये नाटक उत्तम कोटि के हैं।

अपनी संतान के प्रति माता-पिता के अतिशय प्रेम तथा पुत्र की लोकोपहारी प्रवृत्ति का सुन्दर और भावपूर्ण चित्र प्रस्तुत एकांकी 'माता-पिता' में प्राप्त होता है। त्याग और बलिदान का ऊँचा आदर्श प्रस्तुत करने में लेखक विशेष रूप से सफल हुए हैं।]

पात्र

अशोक	—	कालिज का एक विद्यार्थी
यदुनाथ	—	अशोक का सहपाठी
प्रभुदास	—	अशोक का पिता
रामदास	—	यदुनाथ का पिता
डा० प्रभात	—	देश के प्रसिद्ध नेता
कलावती	—	अशोक की माँ
जगवन्ती	—	यदुनाथ की माँ
अनिता	—	अशोक की बहिन

डाक्टर तथा दो युवक

प्रथम दृश्य

[रंगमंच पर एक छोटे-से कसबे का एक मकान का कमरा दिखाई देता है। आगे चौक है। आवश्यकता होने पर मकान की बाहिरी दीवार हटाई जा सकती है। परदा उठने पर दीवार हटी हुई है। कमरे का भीतरी भाग दिखाई देता है। एक दूकानदार का कमरा है। उसी में सोते-बैठते हैं। अनुपात से सामान उसमें बहुत है। कपड़ों के तीन ट्रंक, दो चीड़ की छोटी-छोटी मेजें, दो मोढे और दो चारपाइयाँ। ऊपर की दीवार पर केवल नये साल का एक कैलेंडर लटका है। एक अलमारी है, उसमें कुछ पुस्तकें, टीन के डब्बे, दो चाय-दानियाँ और दो-तीन गिलास हैं। ऊपर आले में सस्ती टाइमपीस सबेरे के छः बजा रही है।

कमरे के बीच दो चारपाइयाँ पास-पास बिछी हैं। बिछावन साधारण है। दरवाज़े के पास वाली चारपाई पर एक पुरुष आँखें बंद किये लेटा है। उसे ज्वर चढ़ा है। क्षण-क्षण में जागकर वह द्वार की ओर देख लेता है। फिर लंबी साँस लेकर आँखें मीच लेता है। उसकी आयु ५० के ऊपर है। दूसरी चारपाई पर एक लड़की चादर ताने गहरी नींद में सोई है। सहसा एक स्त्री तेजी से वहाँ आती है। आयु लगभग ४५ वर्ष की है। रंग गोरा और आकृति सुन्दर है।]

कलावती: (खुश होकर) बाहर शोर मच रहा है। जान पड़ता है कि अशोक आ गया।

प्रभुदास: (एकदम उठकर) अशोक आ गया है? कहाँ है?

कलावती: आप क्यों उठे? लेट जाइए। मैं देखती हूँ।

[स्त्री शीघ्रता से चली जाती है। पुरुष उसी तरह बैठा रह जाता है। स्त्री फिर आती है।]

प्रभुदास: (निराश स्वर) अशोक नहीं आया। राम बाबू देहली जा रहे हैं। न जाने अशोक क्यों नहीं आया। छुट्टी हुए चार दिन हो गए।

[प्रभुदास चुपचाप आँखें बंद कर लेते हैं फिर एकदम खोलकर कहते हैं।]

प्रभुदास: इस बार अशोक का वर्ष-फल पण्डित रामसेवक ने बनाया है। कहते हैं कि इस वर्ष ग्रह बहुत सुन्दर हैं। जल्दी ही उसका नाम संसार भर में फैल जायगा।

कलावती: (प्रसन्नता से भरकर) सच!

प्रभुदास : पण्डित रामसेवक माने हुए ज्योतिषी हैं। उनकी बात झूठ नहीं हो सकती और देखो न, अभी से उसका नाम अखबारों में छपने लगा है।

[भावावेश]

कलावती : (श्रद्धा से) पुत्र के भाग्य के साथ माँ-बाप का भाग्य भी जुड़ा होता है।

प्रभुदास : (गद्‌गद् होकर) कुछ भी हो, एक दिन दुनिया इस बात को जान लेगी कि प्रभुदास ने आप कष्ट उठाये परन्तु लड़के को शिक्षा देने में कोई कसर न उठा रखी।

[इसी समय पास की चारपाई पर अनिता बड़बड़ा उठती है।]

कलावती : (चौंककर) क्या है अनिता ?

प्रभुदास : (चौंककर) बेटी, बेटी, क्या है ?

अनिता : (नींद में) भइया ... (ज़ोर से) भइया, तुम कहाँ जा रहे हो ? (करुणा से) मैं तुम्हारे साथ चलूँगी, भइया (ज़ोर से) ओ भइया ...

कलावती : (पास जाकर) अनिता-अनिता।

अनिता : (हड़बड़ाकर) माँ !

कलावती : क्या है बेटी ?

[अनिता उठ बैठती है। वह लगभग १५ साल की सुन्दर लड़की है। घबराहट के कारण इधर-उधर देखती है। पर मां को देखकर ढाढ़स होता है।]

कलावती : (पास बैठ कर) सपना देखती थी, बेटी ! क्या था ?

अनिता : बड़ा बुरा सपना था, मां। भइया न जाने कहां चले गये ?

प्रभुदास : (मुस्कराकर) कहाँ चले गये, अनिता ?

अनिता : पिता जी, मैं और भइया एक वाटिका में बैठे थे। तभी एक युवक ने आकर कहा, 'अशोक, लड़ाई आरंभ हो गयी। वह पागल हो उठे हैं। आओ, हम उन्हें रोकें।' भइया उसी वक्त जाने को तैयार हो गये। मैंने पूछा, 'कौन लड़ रहा है, भइया।' पर वह नहीं बोले। बस, चले गये। उसी तरह नंगे पांव, निहत्थे।

कलावती : नंगे पांव निहत्था (एकदम) फिर क्या हुआ ?

अनिता : फिर मेरी आंख खुल गई।

प्रभुदास : (सोचकर) सपने का फल अच्छा होगा। डरने की कोई बात नहीं।

कलावती : सच, अच्छा होगा ?

प्रभुदास : हां, ऐसे सपनों से आयु बढ़ने का योग होता है।

अनिता : तब तो ठीक है, मां ! (मुड़कर) ज्वर कैसा है पिताजी ?

प्रभुदास : (हँसकर) उतर जायगा बेटा। (रामदास का प्रवेश) कौन रामदास। आओ रामदास। कैसे आये ?

रामदास : ज्वर उतरा भइया।

प्रभुदास : उतर जायगा ? हाँ, क्या यदु आ गया ?

रामदास : वही तो पूछता था। अशोक भी नहीं दिखाई देता। क्या बात है, चार दिन हो गए। यदु की माँ तो रो-रोकर पागल हो रही है।

प्रभुदास : (हँसकर) तुम्हारी स्त्री बड़ी कच्ची । अरे! वे क्या बालक हैं जो खो जाएंगे। युवक हैं पर हाँ, उन्हें चिट्ठी डाल देनी चाहिए थी।

रामदास : यही तो भइया। वह कहती है—तुम जाओ।

कलावती : वह माँ है, रामदास! माँ का दिल बड़ा पापी होता है।

रामदास : और तुम क्या हो भाभी ?

प्रभुदास : अरे रामदास! यह काम नहीं है। रात भर गाड़ी की गड़गड़ाहट कानों में गूँजती रही है। और यह अनिता तो सोते-सोते भी 'भइया भइया' चिल्ला रही थी। (हँसता है।) जा बेटी, जरा वैद्य जी को देखना। आ गये हों तो मैं जाऊँगा।

अनिता : अच्छा, पिता जी। (जाती है।)

[इसी समय तेजी से जगवन्ती का प्रवेश। हाथ में तार है। घबरा रही है।]

जगवन्ती : तार आया है। वहाँ लड़ाई हो गई।

कलावती : (एकदम) कहाँ ?

प्रभुदास : लड़ाई, कैसी लड़ाई ?

रामदास : किसने कहा ? देखूँ तार।

[तार लेकर व्यग्रता से पढ़ता है।]

"नगर में लड़ाई फूट पड़ी है। गुण्डे नागरिकों को तंग कर रहे हैं। आने में एक-दो दिन की देर हो सकती है। चिन्ता की बात है। हम सकुशल हैं।" तो यह बात है। मैं भी कहूं कि वे अब तक आये क्यों नहीं।

प्रभुदास : पर वे तो सकुशल हैं। चिन्ता की कोई बात नहीं, यही लिखा है न।

रामदास : हाँ !

प्रभुदास : लेकिन लड़ाई कैसे हुई ?

कलावती : लड़ाई के बारे में कुछ नहीं लिखा।

रामदास : नहीं। पर मैं अखबार लाता हूं; उसमें जरूर सब बातें लिखी होंगी। (तेज़ी से जाता है।)

प्रभुदास : कुछ भी हो, कालेज शहर से दूर है।

कलावती : हाँ, वे लोग लड़ाई में नहीं गये होंगे।

जगवन्ती : तुम नहीं जानती, भाभी। वे जरूर गये होंगे।

कलावती : कैसे गये होंगे ? कालेज वाले क्या उन्हें जाने देंगे ?

प्रभुदास : हाँ, नहीं जाने देंगे। पर यह लड़ाई हुई कैसे ?

जगवन्ती : यही तो पता नहीं।

कलावती : अभी पता लग जायगा। देवर जी को आने दो।

जगवन्ती : भगवान् करे सब ठीक हो। .. लो वह आ गये !

प्रभुदास : (तेज़ी से रामदास का प्रवेश) क्या है रामदास ? क्या खबर आई ?

रामदास : (बोलते हुए हाँफता है) शहर में बहुत जोर का दंगा हो गया है।

कलावती : ओह !

जगवन्ती : कालेज का कुछ नहीं लिखा।

रामदास : (उसी तरह पढ़ता हुआ) नगर के प्रतिष्ठित लोग और सभायें दंग रोकने का प्रयत्न कर रही हैं। उन्होंने सरकार के साथ सहयोग किया है, लेकिन सब से बढ़कर कालेज की ही एक पार्टी है ...।

कलावती : (काँपकर) कालेज की ही पार्टी ... !

जगवन्ती : क्या दंगा कालेज में हुआ था ?

रामदास : हाँ, कालेज के लड़कों ने हड़ताल की थी। आपसी झगड़ा था पर धीरे-धीरे वह बढ़ गया।

प्रभुदास : लेकिन हमें तो कुछ पता नहीं।

कलावती : क्या अशोक और यदु भी इस झगड़े में थे ?

रामदास : इन बातों का तो कुछ पता नहीं लगता। पर वह झगड़ा बहुत बढ़ गया और नगर के गुण्डों को मौका मिल गया। उन्होंने जगह-जगह आग लगा दी।

जगवन्ती : (घबराकर) आग लगा दी।

रामदास : हाँ, आग लगा दी, लूटा, हत्यायें कीं। तब मानवता के पुजारी पन्द्रह नवयुवक पागलों की तरह आग में कूद पड़े। उन्होंने सैकड़ों निर्दोष आदमियों को मरने से बचाया है। उनका नेता एक सुन्दर युवक है। उसका नाम अशोक है।

कलावती : (काँपकर) अशोक! मेरा अशोक!! मेरा अशोक लड़ाई में है ?

प्रभुदास : क्या अशोक उनका नेता है ? मेरा बेटा अशोक !

जगवन्ती : लेकिन यदु का नाम नहीं है। वह जरूर उसके साथ होगा। वह अशोक को नहीं छोड़ सकता।

प्रभुदास : अशोक का नाम अखबार में छपा है। देखा, मैं कहता था न ... ...

कलावती : (अनसुना करके) अशोक अब नहीं आयेगा। अशोक का नाम ... ...

[वह बोल नहीं सकती, उसका हृदय उमड़कर बह पड़ता है।]

रामदास : (ढाढ़स के स्वर में) भाभी ! रोती हो ? नहीं भाभी, जो पुण्यात्मा हैं, भगवान् उनको रक्षा करते हैं।

जगवन्ती : भाभी, मैं कहती थी न कि मेरा दिल घबड़ा रहा है। मैं सब कुछ जानती थी। बेटा माँ के दिल ही में तो रहता है। भाभी, तुम रोती हो लेकिन मैं क्या करूँ ... ... मैं क्या करूँ ? (रामदास से) सुनते हो, मैं जाऊँगी। मैं अभी जाऊँगी ... ...।

रामदास : कहाँ जाओगी ? वहाँ के रास्ते बन्द हैं।

कलावती : रास्ते बन्द हैं ?

रामदास : हाँ भाभी, रास्ते बन्द हैं। शरारती लोगों ने साधारण-से आपसी झगड़े को साम्प्रदायिक रूप दे दिया। अब तो हमें परमेश्वर से ही प्रार्थना करनी चाहिए।

जगवन्ती : (रोती हुई) परमेश्वर ... ... परमेश्वर ... ... ।

कलावती : (हठात् स्वस्थ होकर) रोओ मत, जगवन्ती। रोना पाप है।

प्रभुदास : हाँ, रोना पाप है। रामदास, यह सब क्या हो गया। अनिता का सपना ... ... (अनिता का हाँफते-हाँफते प्रवेश)

अनिता : माँ ! क्या भइया लड़ाई में चले गये ?

कलावती : (दृढ़ता से) हां बेटी। तुम्हारे भइया ने यदु के साथ सैकड़ों जानें बचायीं। वह सकुशल हैं।

अनिता : (रामदास से) सचमुच चाचा जी ?

रामदास : सच बेटी। यह अखबार है, तू पढ़ ले न ?

[अनिता अचरज से पढ़ती है। आँखों में पानी भर आता है। जगवन्ती पगलों की तरह उसे देखती है। रामदास भी उमड़ते हुए हृदय के आंसू रोकता है। केवल कलावती मुसकराती है। अनिता एकदम पढ़ना बन्द कर देती है।]

अनिता : चाची, तुम रोओ मत। पिता जी, भइया ने बहुत सुन्दर काम किया है। मैं अभी जाकर सबसे कहती हूं।

[अनिता झटपट जाती है।]

रामदास : मैं अभी जाकर ताजा खबर देखता हूं। (जाता है।)

जगवन्ती : (रोती हुई) तुम सब कठोर हो पर मैं क्या करूं। जिस दिन अशोक और यदु मुझे आकर प्रणाम करेंगे, उसी दिन मैं समझूंगी परमेश्वर ने बड़ा काम किया है। नहीं तो... नहीं... ओह ! मैं क्या करूं ? (जाती है।)

प्रभुदास : मैं भी वैद्य जी के पास जाता हूं। वहीं पर नई खबरों का पता लगेगा। रामसेवक पंडित की बात कितनी ठीक हो रही है। अशोक का नाम अब चारों ओर फैल जायगा।

कलावती : ऐसा पुत्र पाकर हम धन्य हुए। न जाने हमने कितने पुण्य किये होंगे। लेकिन भगवान् उसे कुशल से रखे। कहीं.. ओह ... मैं चाहती हूं कि उड़कर उसके पास पहुंच जाऊं और छाया की तरह उसके साथ लगी रहूं। (हठात् चौंककर) कौन ?

अनिता : (आवाज़ सुनाई देती है।) माँ, पिता जी। यदु भइया आये ...

कलावती : (एकदम) यदु आया है, कहाँ है ? सुना जी, यदु आया है ।

[अनिता का प्रवेश, वह हाँफ रही है ।]

अनिता : पिता जी ! यदु भइया अभी आये हैं । वह कहते हैं, भइया कुशल से हैं ।

प्रभुदास : वह ठीक है । मैं कहता था न । लेकिन यदु कहाँ है ? देखूं ...

अनिता : नहीं, नहीं । आप न जायँ, पिता जी, वह यहीं आ रहे हैं ।

[यदु का प्रवेश, जगवन्ती और रामदास भी हैं । यदुनाथ बीस वर्ष का साँवला युवक है । उसके हाथ में चोट लगी है पर वह खुश है । सबको प्रणाम करता है ।]

यदुनाथ : प्रणाम ताऊ जी, प्रणाम ताई जी ।

कलावती : जुग-जुग जियो, बेटा ।

प्रभुदास : जीते रहो बेटा । अशोक कैसा है ?

यदुनाथ : सब ठीक है ताऊ जी । आप लोगों का पत्र पाकर ही उन्होंने मुझे भेजा है । आप लोग दुखी न हों । स्टेशन तक साथ आये थे । शीघ्र ही शांति होने पर वह भी आएंगे ।

प्रभुदास : कैसे हैं वहाँ के आदमी ? अब भी लड़ते हैं ।

यदुनाथ : वह तो हमारे जैसे ही हैं ? पर कभी-कभी आदमी के भीतर का राक्षस जाग पड़ता है ।

रामदास : परमात्मा की लीला है, बेटा । जो वह चाहता है, वही होता है ।

यदुनाथ : (एकदम तेज होकर) आपके इस परमेश्वर ही ने तो सब अनर्थ किया है । जो परमेश्वर आदमी को आदमी का रक्त पीने की प्रेरणा दे उसे हम नहीं मानते । इस परमेश्वर ने इतनी सुन्दर पृथ्वी पर इतने भयानक आदमी क्यों पैदा किये ?

रामदास : (सकुचाकर) लेकिन बेटा ! उसकी आज्ञा के बिना पत्ता भी नहीं हिलता । और वह सब भले केलिए करता है ।

यदुनाथ : (उसी तरह) यदि वह सब भले केलिए करता है तो आप लोग क्यों घबरा रहे हैं । क्यों नहीं परमेश्वर का विधान मानकर वीर पुरुषों की तरह उत्सव मनाते कि आपके पुत्रों ने मरती हुई मानवता की रक्षा की है ?

प्रभुदास : (हँसकर) पगला यदु क्या बकने लगा । आ इधर बैठ ।

जगवन्ती : (रुंधा कण्ठ) पगला ! तू क्या जाने माँ-बाप का दिल कैसा होता है ?

यदुनाथ : जानता हूं, माँ ! मेरे लिये तुम्हारे प्राण निकल रहे हैं । अशोक को भी तुम चाहती होगी । पर माँ, क्या तुम जानती हो कि हमारे साथ और कितने माँ के लाल हैं । उनके लिए क्या तुम्हारी आँखों से पानी की एक बूंद भी टपकी ? और जाने दो माँ, यदि मैं आकर तुमसे कहता, माँ ! आदमी-आदमी के खून से होली खेल रहा है । मैं उसे रोक रहा हूं तो क्या तुम जाने देतीं ।

[सब एकदम चुप रह जाते हैं । सन्नाटा छा जाता है ।]

यदुनाथ : बोलो पिता जी ! क्या तुमने हमें कायर नहीं बना डाला । क्या तुम्हारी करुणा, तुम्हारा प्रेम, तुम्हारी विशालता सब स्वार्थ की क्षुद्र सीमा में नहीं बँधे हैं ।

कलावती : यदु ! तुम क्या कहने लगे ? तुम्हें किसने बताया कि हम नाराज हैं । हमारे आँसू भय के आँसू नहीं हैं । बेटा ! ये प्रेम और अभिमान के आँसू हैं । कहो तो तुमने क्या किया ?

यदुनाथ : हमने क्या किया यह हम नहीं जानते । अशोक ने जो कहा, वही किया । वह आयेंगे तो सुना देंगे ।

कलावती : अशोक सुनाएगा ? नहीं यदु, वह भी क्या बोलना जानता है?

यदुनाथ : (नम्र होकर) तुम ठीक कहती हो ताई, अशोक भइया बोलना नहीं जानते । कर्मशील पुरुषों के मुख में वाणी होती ही नहीं । अच्छा, मैं अब जाऊँगा ।

जगवन्ती : (चकित) क्या ?

रामदास : अभी जायगा ?

कलावती : ऐसी क्या बात है, बेटा ?

प्रभुदास : अभी नहीं । अभी तो बातें भी नहीं हुईं ।

यदुनाथ : ताऊ जी ! मैं अधिक देर नहीं ठहर सकता । उन लोगों को अकेला छोड़ आया हूं ।

जगवन्ती : लेकिन बेटा ... ... ।

यदुनाथ : लेकिन-वेकिन कुछ नहीं, माँ ! मैं जरूर जाऊँगा । तुमने मुझे देख लिया । दूसरे बेटों की माताएँ भी तो तरस रही होंगी । पिता जी ... ...

रामदास : (चौंककर) मैं कहता था कि गाड़ी शाम को ... ...

यदुनाथ : (बीच ही में) पिता जी ! मैं इसी गाड़ी से जाऊँगा ।

रामदास : (उद्विग्नता को रोककर) अच्छा, अच्छा । मैं अभी जाता हूं (एक क्षण रुककर) मैं कहता था कि मैं भी तुम्हारे साथ चलूं तो ... ...

जगवन्ती : हाँ-हाँ, तुम जरूर चले जाओ ।

यदुनाथ : नहीं पिता जी । केवल मैं जाऊँगा और अभी जाऊँगा । आप अभी ताँगा मंगवा दीजिए ।

रामदास : अच्छा बेटा । मैं अभी मंगवाता हूं ।

[रामदास जाता है]

जगवन्ती : अच्छा, चल खाना तो खा ले।

यदुनाथ : नहीं माँ। (एक क्षण रुककर) अच्छा, चलो।

[जगवन्ती जल्दी से चली जाती है।]

यदुनाथ : (उठकर) मैं अब जाऊँ, ताऊ जी।

प्रभुदास : (अनसुनी करके) यदु बेटा! क्या सचमुच अशोक का नाम लोग श्रद्धा से लेते हैं?

यदुनाथ : हाँ ताऊ जी। अशोक भइया ने वह काम किया है जो बड़े से बड़े नेता नहीं कर सकते।

प्रभुदास : सचमुच तुम ऐसा समझते हो, यदु!

यदुनाथ : मैं कहता हूं अशोक भइया अमर हो गये।

प्रभुदास : (गद्‌गद् होकर) तुम जुग-जुग जियो, बेटा। (एक क्षण रुककर) कुछ भी हो, एक दिन दुनिया कहेगी कि प्रभु पैसे वाला नहीं था लेकिन सन्तान के प्रति उसने अपना कर्तव्य पूरा किया।

[तभी रामदास की आवाज सुनाई देती है।]

रामदास : यदु, ताँगा आ गया है। (यदु उठता है। अनिता और कलावती भी उठती हैं।)

यदुनाथ : नमस्कार, ताऊ जी!

प्रभुदास : परमात्मा तुम्हारी रक्षा करे, बेटा।

कलावती : भगवान् करे तुम जल्दी लौटो।

[कलावती उसका माथा चूम लेती है। आँखों में पानी भर आता है। यदु चुपचाप बाहर निकल आता है। केवल अनिता साथ आती है। कमरे के आगे दीवार लग जाती है।]

अनिता : यदु भइया !

यदुनाथ : ओह ! अनिता ! क्या कहती है ?

अनिता : यदु भइया ! तुम उन सबसे कहना कि तुम्हारी बहिन अनिता को तुम जैसे भाइयों पर बड़ा गर्व है। वहाँ से लौटो तो एक बार यहाँ अवश्य आना। मैं बाट देखूँगी। अच्छा !

यदुनाथ : (अवरुद्ध कंठ) अच्छा, कहूंगा। लेकिन ... ... कौन पिता जी! क्या बात है ? आप बोलते क्यों नहीं ?

रामदास : (रुंधा कंठ) बेटा, अभी तार आया है कि अशोक बुरी तरह घायल हो गया। उसे यहीं ला रहे हैं।

यदुनाथ : क्या ... ...

अनिता : क्या भइया घायल हो गये ? (कलावती तेज़ी से आती है।)

कलावती : क्या हुआ, अशोक को क्या हुआ ?

[सब तेजी से घबराए हुए प्रभुदास के कमरे में जाते हैं। परदा गिर जाता है।]

दूसरा दृश्य

[वही कमरा। अब उसमें केवल एक चारपाई है। उस पर अशोक लेटा है। उसे खूब तेज बुखार चढ़ा है। उसके सिर, हाथ और पैरों पर पट्टियां बंधीं हैं। पट्टियों पर जगह-जगह लहू चमक आया है। उसकी आँखें बन्द हैं। प्रभुदास कुण्ठित, मलिन उसके सिरहाने की तरफ फर्श

पर बैठे हैं। कलावती पागल-सी बेटे को देख रही है। एक कोने में अनिता है जो क्षण में गम्भीर और क्षण में द्रवित हो उठती है। फर्श पर प्रभुदास के पास रामदास, जगवन्ती, यदु और दो नवयुवक बैठे हैं। वे सब दुख और सुख के फांसे में फंसे अशोक की ओर देख रहे हैं। डाक्टर भी है। वह अशोक की परीक्षा कर रहा है।]

डाक्टर: (गंभीर होकर) मैं इन्हें होश में तो ला सकता हूं परन्तु ...।

प्रभुदास: परन्तु क्या डाक्टर साहब ?

डाक्टर: मैं कहता था कि यह रात बीत जाती तो ठीक था।

प्रभुदास: डाक्टर साहब, मैं गरीब हूं पर अशोक केलिए जो कहोगे, वही करूंगा। जो मांगोगे, वही दूंगा। दुनिया यह नहीं कह सकेगी कि प्रभुदास बेटे केलिए कुछ करने में झिझका था।

डाक्टर: नहीं, मैं यह नहीं सोचता। अशोक केलिए मैं कुछ कर सकूं तो अपने को धन्य समझूंगा।

यदुनाथ: डाक्टर, मुझे अचरज है कि भइया के प्राण कहां अटके हैं।

एक युवक: ये तुम्हें स्टेशन छोड़कर लौट रहे थे कि इन्होंने कुछ लड़कियों को घिरे हुए देखा। बस, यह उधर ही दौड़े। इन्होंने उन लड़कियों को तो बचा लिया पर स्वयं न बच सके।

दूसरा युवक: वहां जो व्यक्ति था, उसनें बहुत रोका पर वह न रुके। हमारी राह तक न देखी। जब तक हम पहुंचे, यह घायल हो चुके थे।

पहला युवक: डाक्टर! जिसने प्राणों का मोह नहीं किया, उसका यह अन्त।

[सहसा अशोक आँखें खोल देता है।]

अशोक : (क्षीण स्वर में) यह अन्त शानदार है। बहुत शानदार। मैं इसके योग्य नहीं हूं पर ... ...

प्रभुदास : बेटा आ ... ...

कलावती : (गद्गद् होकर) बेटा ! मेरा बेटा ... ...

अशोक : तैन माँ, तुम रोती हो ? न माँ, तुम रोओ नहीं। मैं अच्छा हो जाऊंगा और न भी हुआ तो भी तुम रोना मत। एक के बदले अनेक अशोक तुम्हें मिलेंगे, माँ।

कलावती : मैं नहीं रोती, बेटा। मैं रोऊँगी क्यों ? तू अच्छा हो जा।

अशोक : अनिता कहाँ है ?

अनिता : (चौंककर) भइया।

अशोक : अनिता, अनिता तू...तू ... आरती नहीं करेगी ? कर पगली ...

[अशोक फिर आँखें बन्द कर लेता है। देश के प्रसिद्ध नेता डाक्टर प्रभात प्रवेश करते हैं।]

प्रभात : कहाँ है, अशोक ?

प्रभुदास : (उठकर) इधर है, इधर। आप, आप यहाँ आइए। (प्रफुल्लित होकर) अब डर नहीं है। आप आये हैं। परमेश्वर ने आपको भेजा है। आप जरूर अशोक को बचा लेंगे।

डा० प्रभात : आप अशोक के पिता हैं ?

प्रभुदास : (गर्व से) जी हाँ। मैं अशोक का पिता हूं। यह माँ है, वह बहिन अनिता है। ये मित्र हैं। मैं अशोक केलिए कुछ भी उठा न रखूँगा। मैं दुनिया को यह कहने का अवसर न दूंगा

कि प्रभुदास ने अपने बेटे केलिये कुछ नहीं किया। आप देखिये न ... ...

[डा० प्रभात गम्भीर होकर अशोक की जाँच करते हैं। उनका चेहरा चिन्तित हो जाता है।]

प्रभुदास : कैसा है अशोक ?

प्रभात : अच्छा हो यह रात शान्ति से बीत जाय।

अशोक : पिता जी।

[अशोक आँखें खोलता है।]

प्रभुदास : बेटा, बेटा, देखो डा० प्रभात। आये हैं।

अशोक : (अनसुना करके) यदु कहाँ है ?

यदुनाथ : (आगे बढ़कर) मैं यह रहा, भइया।

अशोक : यदु, अपनी प्रतिज्ञा याद है न ? मेरे माँ-बाप को यह न मालूम होने देना कि अशोक अब दुनिया में नहीं है।

यदुनाथ : (रुँधा कंठ) तुम ऐसा क्यों कहते हो अशोक।

अशोक : पिता जी, माँ, प्रणाम। अनिता अच्छी तरह ... ...

[सहसा चुप हो जाता है। सब चिन्तातुर होकर एक-दूसरे को देखते हैं। डा० प्रभात की दृष्टि उसके मुख पर जमी है। दो क्षण बाद वह बड़ी गम्भीरता से बोल उठते हैं।]

प्रभात : पक्षी उड़ना चाहता है।

कलावती : (घबराकर) आ-आ ?

प्रभुदास : क्या कहा ? अशोक! अशोक!!

रामप्रसाद : आप देखिए तो डाक्टर साहब।

प्रभात : (सिर हिलाकर) देख तो रहा हूं। खेल समाप्त हो चुका है। एक दिव्यात्मा पृथ्वी पर उतरी थी, वह अब लौट रही है। अशोक जा रहा है।

[यह कहकर डा० प्रभात रुकते नहीं, बाहर चले जाते हैं। कमरे में उपस्थित सब व्यक्ति पिघल उठते हैं। कलावती हा-हा करके अशोक से चिपट जाती है। जगवन्ती उसे संभालती है। प्रभुदास जैसे कहीं खो जाते हैं। अनिता सुबक उठती है।]

कलावती : अशोक, अशोक, मेरे बेटे, नहीं, नहीं ... ...

प्रभुदास : (सहसा जागकर) क्या करती हो अशोक की माँ, रोती हो। अशोक ने कहा था — रोना मत और तुम अशोक की बात टालती हो। नहीं, नहीं यह रोना बन्द करो। अशोक की माँ, यह रोना बन्द करो।

[कलावती नहीं सुनती। उसकी छाती फट गयी है। उसकी वाणी कमरे और दीवारों को कंपा देती है।]

कलावती : (बिलखती हुई) मैं माँ हूं, माँ। मेरा रक्त, मेरा मांस, मेरा बच्चा ... ... मेरे कलेजे का टुकड़ा ... ...

प्रभुदास : लेकिन मैं बाप हूं। अशोक वीर पुत्र था। मैं वीर पुत्र का बाप बनूंगा। मुझे अशोक पर गर्व है। मैं दुनिया को यह कहने का मौका नहीं दूंगा कि अशोक जैसी महान् और दिव्य आत्मा का पिता प्रभुदास रोया था। मैं हंसूंगा।

[सचमुच वे बड़े जोर से हंस पड़ते हैं।]

अनिता : (जोर से रोकर) पिता जी ! पिता जी !!

प्रभुदास : (अनिता को छाती में भरकर) अशोक की बहिन होकर रोती है। तुझे अशोक चाहिए न ? देख अनिता, यह भारत अनेक अशोकों से भरा पड़ा है, फिर तू क्यों रोती है ? मैं भी तो नहीं रोता, हंसता हूं। तू भी मेरे साथ हंस।

[प्रभुदास फिर हंस पड़ते हैं। सब युवक हत्प्रभ उस दुबले-पतले अधेड़ पुरुष के साहस को देखते हैं। सहसा यदु आगे बढ़कर कलावती को उठा लेता है।]

यदुनाथ : माँ, तुम हम सबकी माँ हो। हमें आशीर्वाद दो, माँ ! भारत के समस्त पुत्र अशोक के पद-चिह्नों पर चल सकें।

एक युवक : सच माँ ! हम मानव के रक्त को व्यर्थ न जाने देंगे। हम सारे हिन्दुस्तान में अशोक ही अशोक पैदा कर देंगे। मां तुम, सबे हिन्दुस्तान की माँ हो।

[सहसा कलावती उठकर उन्हें देखती है। उसकी आँखें चमक उठती हैं। वह उन्हें देखती फिर अशोक को देखती है और फिर उस पर गिर पड़ती है।]

कलावती : मैं क्या करूं। मैं माँ हूं। मैं अपने कलेजे को कैसे पत्थर करूं। कैसे ... ...

[परदा गिर जाता है।]

[यदि खेला जाय तो यह नाटक यहीं समाप्त हो जाना चाहिये।]

[डा० प्रभात का प्रवेश। नगर के अनेक गणमान्य पुरुष उनके साथ अन्दर आते हैं। एक क्षण वे सब सिर झुकाये खड़े रहते हैं फिर डा० प्रभात कहते हैं।]

प्रभात : बाहर अपार जानता है प्रभुदास जी। अशोक को ले चलो। ऐसे महान् पुरुष के लिये आँसू नहीं बहाने चाहिए।

प्रभुदास : (उठकर) चलिए डाक्टर साहब ! हम सब तैयार हैं। हम आँसू नहीं बहाते लेकिन वह माँ है। उसे क्या कहूँ।

[कहते-कहते वे कुहनी उठाकर आँखें पोंछ लेते हैं। फिर बाहर जाते हैं। रामदास उनके पीछे जाता है। उसकी आँखें गीली हैं। डा० प्रभात एक बार अशोक को देखते हैं फिर कलावती को। चुपचाप बाहर आ जाते हैं। परदा गिरने लगता। गिरते-गिरते युवक भी बाहर जाते दिखाई देते हैं। केवल माँ की सिसकियाँ सुनाई देती हैं। परदा फिर उठता है और इस बार अशोक तिरंगे में लिपटा हुआ दिखाई देता है। दोनों युवक, यदु, रामनाथ, प्रभुदास सब तैयारी में व्यस्त हैं। अनेक व्यक्ति सिर झुकाये खड़े हैं। स्त्रियाँ अभी तक रोये जा रही हैं। कलावती प्रयत्न करती है पर उसकी छाती जैसे फट गई है। यहीं परदा पूरी तरह गिर जाता है।]

कठिन शब्दार्थ

चीड़ — rattan । कसर — कमी । ढाढ़स — सान्त्वना । निहत्था — बिना हथियार के । दंगा — turbulence । शरारती — wicked, mischievous । साम्प्रदायिक — communal । ताजा — fresh । कायर — coward, भीरु । सीमा — limit । तरसना — to long, to desire । ताऊ — Father's elder brother । श्रद्धा — respect. ताँगा — घोड़ा-गाड़ी । माथा — forehead । बाट देखना — प्रतीक्षा करना । बुखार — fever । पट्टी — bandage । फ़र्श — floor । झिझकना — to hesitate । शानदार — glorious । सुबकना — सिसकना । अधेड़ — middle aged ।

व्याख्या करें:—

१. पुत्र के भाग्य के साथ माँ-बाप का भाग्य भी जुडा होता है ।

२. एक दिन दुनिया इस बात को जान लेगी कि प्रभुदास ने आप कष्ट उठाये, परन्तु लडके को शिक्षा देने में कोई कसर न उठा रखी ।

३. आपके इस परमेश्वर ही ने तो सब अनर्थ किया है । जो परमेश्वर आदमी को आदमी का रक्त पीने की प्रेरणा दे, उसे हम नहीं मानते । इस परमेश्वर ने इतनी सुन्दर पृथ्वी पर इतने भयानक आदमी क्यों पैदा किए ?

४. क्या तुमने हमें कायर नहीं बना डाला ? क्या तुम्हारी करुणा, तुम्हारा प्रेम, तुम्हारी विशालता, सब स्वार्थ की क्षुद्र सीमा में नहीं बाँधे हैं ?

५. न माँ, तुम रोओ नहीं। मैं अच्छा हो जाऊँगा और न भी हुआ तो भी तुम रोना मत। एक के बदले अनेक अशोक तुम्हें मिलेंगे, माँ।

६. अशोक वीर पुत्र था। मैं वीर पुत्र का बाप बनूँगा। मुझे अशोक पर गर्व है। मैं दुनिया को यह कहने का मौका नहीं दूँगा कि अशोक जैसी महान और दिव्य आत्मा का पिता प्रभुदास रोया था। मैं हँसूँगा।

उत्तर लिखें —

१. अशोक कौन था ? उसने जनता की कैसी सेवा की ?

२. प्रभुदास के चरित्र की विशेषताएँ बताइए।

३. 'कलावती सच्चे अर्थ में माँ थी'—इस बात की पुष्टि कीजिए।

४. 'माता-पिता' एकाँकी नाटक का उद्देश्य क्या है ?